chapter - 6

अध्याय छह

गुजरात के हिन्दी काव्य-साहित्य की सम्यक् समीक्षा

मध्यकाल (वैष्णव-काव्य, संत-काव्य, जैन-काव्य, सूफी-काव्य, रीति-काव्य)

भावपक्ष

कलापक्ष (रस, छन्द, अलंकार, भाषा, संगीत)

काव्यरूप

आधुनिक काल

भावपक्ष (सामाजिक अवधारणा, आम आदमी की दयनीय स्थिति, हास्य और व्यंग्य, प्रकृति, नारी के विविध रूपों का चित्रण, राजनीतिक अध:पतन के प्रति आक्रोश, साम्प्रदायिकता का विरोध, राष्ट्रीय प्रेम एवं सांस्कृतिक एकता, आध्यात्मिक व ईश्वरीय प्रेम, विज्ञान के प्रति दृष्टिकोण)

कलापक्ष (भाषा, रस, अलंकार, बिम्ब, प्रतीक)

काव्यरूप (प्रबन्ध काव्य, मुक्तक, हाइकु, गीत और नवगीत, ग़ज़ल, दोहा)

गुजरात के हिन्दी काव्य-साहित्य की सम्यक् समीक्षा

गुजरात में हिन्दी साहित्य का प्रारम्भ मध्यकाल से माना जाता है। मध्यकाल में भक्तिरस की सर्वव्यापी लहर के प्रसारण के फलस्वरूप गुजरात में अनेक भक्तों, संत-महात्माओं, विभिन्न सम्प्रदायों एवं उनके उपासना के सिद्धान्तों का प्रादुर्भाव हुआ। गुजरात के हिन्दी साहित्य का काल विभाजन 'मध्यकाल' (सन् 1456-1853 ई0 तक) और 'आधुनिक काल' (सन् 1853 ई0 से आज तक)- इस रूप में मिलता है।

मध्यकाल

15वीं शताब्दी से लेकर आधुनिक काल के प्रारंभ तक के गुजरात के मध्यकालीन हिन्दी साहित्य को हमने निम्नलिखित भागों में विभाजित किया है-

1. वैष्णव-काव्य
2. संत-काव्य
3. जैन-काव्य
4. सूफी-काव्य
5. रीति-काव्य

वैष्णव काव्य

प्राचीन काल से गुजरात वैष्णव भक्ति परम्परा का केन्द्र रहा है। गुजरात में वैष्णव भक्ति का पुनरुत्थान वल्लभाचार्य तथा उनके पुत्र विठ्ठलनाथ ने किया। गुजरात में राम और कृष्ण दोनों को आधार बनाकर काव्य रचा गया। फिर भी कृष्ण भक्ति-काव्य पर अधिक जोर रहा। भक्त कवियों में नरसिंह महेता, मीराँबाई, भालण, भीम, ईसरदास, दयाराम आदि ने राम अथवा कृष्ण को आलम्बन बनाकर भक्तिरस से परिपूर्ण अद्वितीय काव्य-रचनाएँ लिखीं और मध्यकाल के काव्य-साहित्य को समृद्ध बनाया।

वैष्णव कवियों के साहित्य में आत्मनिवेदन, दीनता और विनय भाव का वर्णन करते हुए कृष्ण महिमा का गान मिलता है। इनके काव्य में कृष्ण-जीवन की बाल लीलाओं, कृष्ण-गोपी लीलाओं तथा राधा-कृष्ण के प्रेमनिरूपण के विविध पक्षों का वर्णन किया गया है।

मीराँबाई ने कृष्ण की बाल लीला का वर्णन इन शब्दों में किया है-

''उठो लाल जी भोर भयो है, सुर नर ठाढ़े द्वारे ॥
ग्वाल बाल सब करत कुलाहल, जय जय शब्द उचारे।
माखन रोटी हाथ में लीनी, गउवन के रखवारे।।

मीरा के प्रभु गिरधर नागर, शरण आया कूँ तारे।।[1] *''–मीराँबाई*

वैष्णव-काव्य में प्रेम और विरह की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। भालण ने कृष्ण की ब्रजस्मृति-वेदना का हृदय-स्पर्शी चित्रण किया है-

''व्रज को सुख समरत श्याम।

पर्नकुटि सो बिसरत नाहीं, नाहि न भावत सुन्दर धाम।''[2]

वैष्णव कवियों ने श्रीकृष्ण से अपनी शरण में लेने की विनम्र प्रार्थना की है। एक उदाहरण देखिए-

''मोहि पार उतारो जी, तोहि निज भक्त की आन।

हमारे अवगुन नेक न चितवो, अपनो ही करि जान ॥[3] *''–नरसिंह महेता*

सन्त काव्य

गुजरात के निर्गुण धारा के ज्ञान आश्रयी संतों ने हिन्दी में काव्य-रचना की है। गुजरात के संतों ने आध्यात्मिक विषय को लेकर काव्य-रचना की है। इनके पदों में ब्रह्म, माया, जीव, जगत के स्वरूप तथा परस्पर सम्बन्धों की चर्चा हुई है। साथ ही परमात्मा की शक्ति तथा सद्गुरु के महत्त्व का भी प्रतिपादन हुआ है। गुजरात के अनेक ज्ञानमार्गी कवियों की वाणियों से उनकी आध्यात्मिक विचार धारा का परिचय मिलता है। संतों की अपनी आत्मा को मोह-माया के बन्धनों से मुक्त कर परमात्मा से एकत्व स्थापित करने की प्रबल अभिलाषा रही है। इनकी काव्य-रचनाओं में संसार की क्षणभंगुरता, भौतिक सुखों की निस्सारता, इष्ट के प्रति प्रेम और वियोग का दुख भी मुख्य विषय रहे हैं।

गुजरात के मध्यकालीन निर्गुण मतावलम्बी ज्ञान-मार्गी संतों में अखा, दादूदयाल, मुकुंद गुगली, नरसिंह महेता, समर्थदास, मीराँबाई, माधवदास, गोपालदास, लालदास, प्राणनाथ, आनन्दघन, जीवणदास, अनुभवानंद, निरांत, प्रीतम दास, धीरा भगत, छोटम, जीता मुनि नारायण, संतराम महाराज, होथी, वस्ता विश्वंभर, कुबेरदास, भाण साहब, रविभाण साहब, मुड़िया स्वामी, काजी अनवर, मनोहर स्वामी, त्रिविक्रमानन्द, खाकी निर्मलदास, मूलदास, खीमदास, खीम साहब, त्रीकम साहब, दीन दरवेश, नृसिंहाचार्य, महात्यमराम, भोजा भगत, ओंकारेश्वरी, गवरीबाई, अन्नपूर्णा, मोरार साहब आदि-आदि आते हैं।

निर्गुण ज्ञानाश्रयी धारा के संतों अखा, प्रीतम आदि पर गौड़पादाचार्य के अज्ञातवाद एवं शंकराचार्य के अद्वैतवाद के प्रभाव के कारण निर्गुण-निराकार एक ईश्वर को ब्रह्म स्वरूप माना है। प्रीतम ने ब्रह्म को सगुण-निर्गुण दोनों रूपों में मानते हुए अनादि, अटल, अरूप और अछेद माना है-

''ब्रह्म अनादि अटल है, अकल अरूप अछेद,

कहे प्रीतम नित्य कहत है, महिमा चारे वेद।''[4]

संतों ने अपनी वाणी में जीव और ब्रह्म के विभिन्न रूपकों के द्वारा सरल एवं सहज अभिव्यक्ति की है। गुजराती संत मांडण ने जीव में ही ब्रह्म का वास बताते हुए आत्मज्ञान को सर्वोपरि माना है-

''घट-घट रूप आत्मा हरी, मूरख पणि अन्य अणसारी।''[5]

इसी भाव को छोटम ने अपने शब्दों में व्यक्त किया है-

''जो कोई खोजे शिव को, तो खोजे जीवमांय,

जो जीव कु खोज्या नहीं, तो शिव पावे नाय ॥''[6]

संत काजी अनवर के अनुसार आत्मज्ञान होने पर जीव रूपी लहर ब्रह्म-सागर में मिल जाती है जिसको कोई ढूँढ नहीं पाता। निम्नलिखित पंक्तियों में यह अनुभूति दृष्टव्य है-

''साहेब समुंदर जाणीए रे, में समुंदर की मोज,

मोज समुंदर में मिल गई, बाको कोई न पाया खोज ॥''[7]

-काजी अनवर

संतों ने जगत को मिथ्या माना है। वे जगत को असत्य काल्पनिक, अचिरस्थायी, क्षणिक, क्षणभंगुर, मृगतृष्णा एवं स्वप्नवत् मानते है। छोटम के अनुसार सारा जग काल का फंदा है-

''है जग सकल कालका फंदा, न्यारा एक सच्चिदानंदा।।है0।।

नामरूप सब मिथ्या माया, देह स्वतः है गंदा।''[8]

माया वर्णन

मध्यकाल में गुजरात के कवियों ने माया को किसी न किसी रूप में प्रतिष्ठित किया है। शंकर मत से प्रभावित होने के कारण गुजराती संतों की वाणी में माया की उत्पत्ति, प्रकृति, रूप, शक्ति एवं उससे मुक्त होने के उपायों का भी वर्णन, निरूपण एवं प्रतिपादन मिलता है।[9] इन संतों ने माया को महाठगिनी,अविद्या, अजा, अज्ञान आदि कहा है। गुजरात के संतों एवं कवियों के माया सम्बन्धी विचार दृष्टव्य हैं-

संत प्रीतमदास ने माया को जीव और ब्रह्म के साक्षात्कार होने में सबसे बड़ी बाधा माना है। माया का आवरण हटते ही जीव को ब्रह्म का दर्शन हो जाता है।

यह आवरण आठ प्रकार का होता है-

''माया आवरण अष्ट है, पृथ्वी, उदक, तेज।

कहे 'प्रीतम' वायू गगन, गुण अहंकार मन एज ॥''[10]

दादू दयाल ने माया के मोह से बचने के लिए उसके विभिन्न स्वरूपों का वर्णन किया है। जब जीव को ब्रह्म ज्ञान हो जाता है, तब माया भ्रमित होकर वहाँ से प्रस्थान कर जाती है-

''दादू माया चेरी सन्त की, दासी उस दरबारी।
ठकुरानी सब जगत की, तीन्यू लोक मंझारि ॥
दादू जेहिं घट ब्रह्म न प्रगटे, तहँ माया मंगल गाई।
दादू जागे जोति सब, तब माया भरम बिलाई ॥''(11)

गुजरात के प्राय: सभी संतों का विश्वास है कि सच्चे और ब्रह्मानुभवी गुरु की कृपा के बिना परब्रह्म का आभास नही हो सकता। संतों ने रविसाहब कृत 'गुरु-महिमा' मोरार साहब कृत 'गुरु-महिमा, कुबेरदास कृत 'गुरु-महिमा', वस्ता कृत 'गुरु गीता', बिहारीदास कृत 'गुरु-स्तुति', संतराम कृत 'गुरु-बावनी', प्रीतमदास कृत 'गुरु-महिमा', निरांत कृत 'गुरु-महिमा' आदि उल्लेखनीय स्वतन्त्र ग्रंथों के साथ फुटकल पदों और ग्रंथों के विभिन्न अंगों में गुरुमहिमा-गान किया है।

संतराम महाराज के अनुसार सत्गुरु की कृपा से आत्म दर्शन हो जाते है-

''मन मेरा तो मगन हुआ है आतम दर्शन कर कर।
सतगुरु मोहि आन मिले तब पीआ पीआला भर भर ॥''(12)

संत काव्य-साहित्य में निर्गुण ब्रह्म के प्रति प्रेम की तन्मयता एवं उससे मिलने की आतुरता सर्वत्र दिखाई देती है। गुजरात के संतों के काव्यों में प्रेम की उत्कृष्ट भावना तथा विरहानुभूति की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। साधक का हृदय परमात्मा के वियोग में व्याकुल रहता है। गुजरात के संतों की भक्ति में प्रेम की मस्ती तथा विरह की आकुलता है। इनका प्रेम पतिव्रता के प्रेम से किसी भी रूप में कम नही है-

''मैं पतिव्रता नार पियु की, बाहर कबहु न जाऊँ!
चरखा फेरुँ पियुको हेरूँ, आन पुरुष नहीं चाहूँ।''(13)

-रवि साहब

जैन-काव्य

प्राचीन काल से ही जैन धर्म का केन्द्र रहते हुए गुजरात के जैन कवियों ने 17वीं सदी तक अपभ्रंश में काव्य-रचना की है। 17वीं शताब्दी के बाद कवियों ने ब्रजभाषा तथा खड़ी बोली में काव्य-रचना की है। इन्होंने अपने काव्य में प्रेम, संयम, सदाचार और शील का उपदेश दिया है। आध्यात्मिक विचारों के कारण इनकी काव्य-रचनाओं में शांत रस प्रमुख

रहा है। मालदेव कृत 'स्थूलिभद्र फाग' में कोशा के रूप-सौन्दर्य का वर्णन मिलता है परन्तु अन्त में कवि स्थूलिभद्र मुनि का उदाहरण दे कर ब्रह्मचर्य का पालन करने, शील धारण करने और नारी–संगति छोड़ने का उपदेश शांत रस में दिया है-

''मालदेव दम वीनवइ, नांरी-संगति टालउरे,
थूलिभद्र मुनि नी परई, सील महाव्रत पालउरे।।107।।''(14)

जैन कवियों ने साधना के तीन मार्ग माने हैं- ज्ञान, भक्ति और कर्म। जैन कवियों की भक्ति का मूल आधार मुक्ति है। जैन-काव्य में माधुर्य, विनय, दास्य, वात्सल्य, सख्य और दीन भाव की भक्ति दृष्टिगोचर होती है।

जैन-काव्य में कवियों ने स्वयं को तुच्छ मानते हुए अपने आराध्य देव की महत्ता का गुणगान किया है। जैन कवियों ने अपने आराध्य देव जिनेन्द्र के प्रति अनन्य भाव प्रकट किया है। कवि समयसुन्दर ने प्रभु से स्वामी और सेवक का सम्बन्ध जोड़ते हुए प्रभु के चरणों की वन्दना की है-

''नमुं नमुं नमि जिन चरण तोरा,
हूँ सेवक तूं साहिब मोरा ॥1॥
जउ तूं जलधर तउ हूँ मोरा,
जउ तूं चंद तउ हूँ भी चकोरा ॥2॥
सरणइ राखि करइ क्रम जोरा,
समय सुन्दर कहइ इतना निहोरा ॥3॥''(15)

जिनेन्द्र का नाम-जप; अपने आराध्य देव का नाम-स्मरण; चौबीस तीर्थंकरों की वन्दना; प्रभु-भजन करने की महत्ता पर भी जैन कवियों ने बल दिया है। कवि कुमुदचन्द्र ने 'भरत बाहुबलि छन्द' नामक अपने ग्रंथ में आदीश्वर का नाम जपने से भव का फेरा जाने की बात कही है-

''पणविवि पद आदीश्वर केरा
जेह नामें छूटे भव फेरा।''(16)

सभी सम्प्रदायों, सन्तों और भक्त कवियों की तरह जैन भक्त-कवियों ने गुरु की महत्ता का प्रतिपादन किया है। गुरु की कृपा के बिना व्यक्ति मिथ्या संसार में भ्रमण करता रहता है। गुरु की कृपा से ही मोक्ष-मार्ग मिल सकता है।

श्री कुशल लाभ ने आचार्य पुज्यवाहण की भक्ति में उनकी महत्ता का प्रतिपादन करते हुए कहा है-

"आव्यो मास असाढ झबुके दामिनी रे।

जोवइ जोवइ प्रीयडा वाट सकोमल कामिनी रे ॥

o o o

साते खेत्र सुठाम सुधर्मह नीपजइ रे

श्री गुरु पाय प्रसाद सदा सुख संपजइ रे ॥"(17)

सभी जैन कवियों ने धार्मिक सहिष्णुता, असाम्प्रदायिकता, समदर्शिता, धार्मिक उदारता का परिचय दिया है। आनन्दघन के अनुसार राम, रहीम, महादेव, पारसनाथ, ब्रह्मा आदि सब एक ब्रह्म ही है। ज्ञानानन्द जी ने ब्रह्मा, विष्णु और महेश को एक मानते हुए अपनी उदारता और असाम्प्रदायिक भावना का परिचय दिया है-

"अवधू वह जोगी हम माने, जो हमकुं सबगत जाने।

ब्रह्मा विष्णु महेसर हम ही, हमकुं ईसर माने ॥1॥"(18)

जैन कवियों ने आत्मा, परमात्मा, माया, मोक्ष, जीव, रहस्य आदि पर अपने विचार अभिव्यक्त किये हैं। अज्ञान और मोह पूर्ण आत्मा जब विवेकशक्ति द्वारा जब अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान लेती है तब वह मुक्त-दशा अर्थात मोक्ष को प्राप्त कर लेती है।

इस स्थिति में 'सुरति' की बांसुरी बजने लगती है और अनाहत नाद बजने लगता है-

"बजी सुरत की बांसुरी हो, उठे अनाहत नाद,

तीन लोक मोहन भए हो, मिट गए द्वंद विषाद।"(19)

-लक्ष्मी वल्लभ, अध्यात्मफाग, प्रस्तुत प्रबन्ध का प्रकरण 3

जैन कवियों ने व्यक्ति और समाज को स्वस्थ एवं संतुलित बनाने के लिए नैतिकता पर बल दिया है। प्राय: सभी कवियों ने नैतिक आचार-विचार को प्रमुखता देते हुए सरल, उपदेशात्मक, नैतिक विचारों से परिपूर्ण नीतिकाव्य लिखे हैं। मुनि जिनराजसूरि ने 'शील बत्तीसी' में शील धर्म और 'कर्म बत्तीसी' में कर्म की महत्ता पर बल दिया है। इनके अनुसार-

"सील रतन जतने करि राखउ, वरजउ विषय विकार जी।

सीलवंत अविचल पद पामइ, विषई रुलइ संसार जी ॥"(20)

जैन कवियों ने अपने उपदेशों तथा भावों के निरूपण के लिए, प्रकृति का आलम्बनगत चित्रण, प्रकृति का उद्दीपनगत चित्रण, अलंकारगत चित्रण, प्रकृति का मानवीकरण आदि रूप में प्रकृति का काव्यात्मक प्रयोग किया है। विरह के क्षणों में, मिलन के मादकता से सिक्त पलों में, जीवन के विभिन्न क्रिया-कलापों में किसी न किसी रूप में प्रकृति उनकी

रचनाओं में निरूपित हुई है।

भाद्रमास का प्राकृतिक वातावरण विरहिणी को कष्टदायी प्रतीत होता है। उसका एक उद्दीपनगत दृश्य अंकित है-

''मधुकर करइं गुजारव मार विकार वहंति।
कोयल करइं पटहूकड़ा टूकड़ा मेलवा कन्त।।
मलयाचल थी चलकिउ पलकिउ पवन प्रचण्ड।
मदन महानृप पाझइ विरहीनि सिरदंड ॥''(21)

–महानंद गणि

जैन कवियों ने अपनी काव्य-रचनाओं में सामाजिक यथार्थ, समस्याओं और उनके निराकरण का अंकन किया है। इन्होंने अपने उपदेशों, आचरण तथा साहित्य द्वारा समाज के नैतिक, धार्मिक और आध्यात्मिक उत्थान पर बल दिया है। इनके धार्मिक विचारों में उदारता के कारण इनके साहित्य में प्राणी-मात्र के प्रति दया, उदारता, समभाव और समाज-कल्याण का भाव मिलता है। इन कवियों के साहित्य-रचना का उद्देश्य प्राणीमात्र का कल्याण करना है।

सूफी-काव्य

गुजरात की खड़ी बोली अर्थात् गूजरी भाषा के विकास में सूफी संतों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। भारत में मुसलमानों की सत्ता की स्थापना से काफी पहले गुजरात में काफी संख्या में मुसलमान स्थापित हो चुके थे। सिद्धराज जयसिंह के समय से गुजरात में सूफियों का आगमन शुरू हो गया। गुजरात में मुसलमानों के बस जाने के कारण यहाँ की भाषा पर भी उनका प्रभाव पड़ा।

सूफी काव्य की प्रधान विशेषता प्रेमतत्त्व निरूपण है। इन कवियों के काव्य में प्रेम लौकिक होते हुए भी अलौकिकता का स्पर्श करता है।

शेख अहमद खट्टू द्वारा रचित कुछ पंक्तियाँ उदाहरणार्थ दृष्टव्य है-

''दुःखा काजल जे करूँ तो सोकन दुःख दीन्हा
न पियु देखन दीना मुंज न आप देख सकीना
तूं जानता करतार जी मुंज साईं बिसरा
साईं की है सार पिंजरमां जो मन बसे''(22)

सूफी काव्य में प्रेम की पीर स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। शृंगार रस की प्रधानता के कारण कवियों ने स्वयं को जीव और ब्रह्म को पत्नी रूप में माना है। इनकी वाणी में

प्रेम का रस घुला हुआ है।

शाह अली मुहम्मद गामधनी का एक उदाहरण अवलोकनीय है-

"कहीं सो खुसरो शाह कहावे।
कहीं सो शीरीं होकर आवे।
आप खोलू आप खिलाऊँ।
आपे आपस में गुल लाऊँ।" (23)

गुजरात की सूफी काव्यधारा के कवियों ने सूफी होने के कारण अपने काव्य में सूफी-सिद्धान्तों का भी समावेश किया है। सूफियों का ईश्वर के प्रति प्रेम 'इश्क मजाज़ी' (लौकिक) से 'इश्क हकीकी' (अलौकिक) की ओर उन्मुख होता है-

"मजाज़ी इश्क जो रखते हैं जगमां।
उन्हूं कूं ख्वार करता है जमानां।।
हक़क़ी इश्क जो रखते हैं दरदिल।
नहीं पड़ता उन्हूं कूं कुछीं मुश्किल।।" (24)

-यूसुफ जुलेखा

इन सूफी कवियों की एक प्रमुख विशेषता रहस्यवाद है। सूफी कवि मूलत: रहस्यवादी हैं। इनका रहस्यवाद प्रेम और सरसता से युक्त है। आत्मा अपने ब्रह्म के दर्शन के लिए तड़पती रहती है। सारा संसार उस ब्रह्म को देखना चाहता है परन्तु जो एक बार देख लेता है वह अपनी सुध खो बैठता है-

"सब जग तुझ मुख देखें चाहें
जो देखो वह सुध गंवावे
बाजन का तू आहे जीव
तुझ पर वारिया 'बाजन' जीव" (25)

-शेख़ बहाउद्दीन 'बाझन'

सूफी कवियों का काव्य प्रेमलक्षणा भक्ति में डूबा हुआ है। विरह की वेदना उनके काव्य की प्रमुख विशेषता है। इनके विरह-वर्णन पर फारसी का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित हुआ है। इन सूफियों के विरह में अपार पीड़ा, कसक, अहं, हीनता जैसी विशेषताएँ मिलती हैं। एक उदाहरण दृष्टव्य है-

"ना दु:खी जग कोई, दु:ख भर्या है सब कोई रे
कोई महिला मरम न बूझे पात दिल की किसे न सूझे

दु:ख जीव का मेरा किस कहूँ''[26]

रीति-काव्य

गुजरात में हिन्दी साहित्य के मध्यकाल के उत्तरार्ध में रीति ग्रंथों का निर्माण हुआ। यहाँ के राजदरबारों के कवियों एवं राजघरानों के कुछ राजकवियों एवं राजकवयित्रियों द्वारा रीति ग्रंथों का प्रणयन हुआ जिनमें रस-निरूपण के साथ-साथ अलंकार, छन्द, शब्दशक्ति, नायिका-भेद आदि लक्षण-रीतियों पर काव्य-रचना की गई।

गुजरात के राजा-महाराजाओं ने कवियों को राज्याश्रय देने के साथ-साथ स्वयं भी हिन्दी में काव्य-रचना की है। महाराव लखपतसिंह ने 'सदाशिव विवाह', सुरतरंगिनी' और 'लखपत शृंगार' नामक रीति ग्रंथों की रचना की। इनमें राग, लय, ताल, नृत्य आदि शास्त्रीय उपकरणों के साथ-साथ अलंकारों एवं छन्दों का चमत्कारपूर्ण प्रयोग किया है। साथ ही नायिका भेद के आठों प्रकार का वर्णन किया है। 'लखपति-शृंगार' में शृंगार रस को नायिका-भेद का महत्वपूर्ण अंग बताया है-

''रस-नव पै सिंगार रस, सरस रसिक रुचिपाय।
अधिक यामें नायिका, सबजन चित्त सुहाय।।''[27]

राजकोट (कच्छ) के मेहरामण जी ने 'प्रवीण सागर' नामक प्रेमाख्यानक महाकाव्य की रचना की। ''84 सर्गों के बृहद् प्रबन्ध-काव्य में प्रात:, मध्याह्न, संध्या, रात्रि, दिवस, वन, पर्वत, सागर, यज्ञ, मृगया, सैन्य आक्रमण, युद्ध, षड्ऋतु, संयोग, वियोग, विवाह आदि का सविस्तार वर्णन है। इन महाकाव्योचित एवं परम्परागत वर्ण्य विषयों के अतिरिक्त यह ग्रंथ ज्योतिष, राजनीति, आयुर्वेद, काव्यशास्त्र, कामशास्त्र, संगीतशास्त्र, नाट्यशास्त्र, अलंकारशास्त्र, छंदशास्त्र, नायक-नायिका-भेद, शकुनशास्त्र, सामुद्रिक शास्त्र तथा अष्टांग योगादि शास्त्रों के ज्ञान-विज्ञान का ऐसा अतुलित भण्डार है...।''[28]

षड्ऋतु वर्णन में वसन्त ऋतु वर्णन का 'प्रवीण सागर' से उद्धृत एक उदाहरण देखिए-

''बकुल बसंत बेल, बारब बदाम बर,
बोलत बिहंग-वृंद बगन बगन बन।
माधवी मधूक मल्ली मञ्जर महोर मंडि,
मधु मकरंद मोद मगन गगन मन।'' [29]

कुंअर कुशल कृत 'लखपति जससिंधु', दलपतिराय वंशीधर कृत 'अलंकार रत्नाकर'; भगवानदास रिझवार कृत 'शृंगार सिंधु'; भक्त कवि दयाराम कृत 'सतसई'; गोविन्द

गिल्लाभई कृत 'शब्द विभूषण', अलंकारोदधि', 'वक्रोक्ति विनोद', 'श्लेष चन्द्रिका'; भैरवदान गढ़वी कृत 'अलंकार निधि'; केशव अयाची कृत 'शब्द विभूषण'; पिंगल सिंह पाता भाई गढ़वी कृत 'तख्त प्रकाश', 'भाव भूषण'; हमीरजी रतनूं कृत 'लखपति पिंगल', 'गुण पिंगल प्रकाश'; ब्रजभाषा पाठशाला के छात्र दलपति राम कृत 'दलपति विलास' आदि अनेक कवियों द्वारा अनेक रीतिपरक ग्रंथों की रचना हुई।

गुजरात में रस विशेषत: शृंगार, वक्रोक्ति, ध्वनि, नायिकाभेद, नखशिख परम्परा, पिंगल एवं अलंकारों के लक्षण और उदाहरण, संगीतशास्त्र आदि अनेक शास्त्र विषयक काव्य ग्रंथों उनकी प्रवृतियों और उनके भाषा-शैलीगत कौशलों पर लक्षण ग्रंथ लिखने की समृद्ध परम्परा रही है।

कला पक्ष

रस

रस काव्य के प्रमुख तत्त्वों में से एक है जो काव्यानुशीलन से प्राप्त आनन्द से मिलता है। गुजरात के संत-भक्त कवियों ने अपने काव्यों में विभिन्न रसों का समावेश किया है। सम्प्रदाय मुक्त एवं सम्प्रदाय निबद्ध भक्त कवियों, वैष्णव कवियों ने कृष्ण और राम की बाल लीलाओं, रूप-सौन्दर्य, गुण तथा अन्य लीलाओं का भक्ति भाव से वर्णन करते हुए अपनी रचनाओं में वात्सल्य तथा शृंगार रस का सुन्दर निरूपण किया है। इष्ट देव या आराध्य देव अथवा आश्रयदाताके जीवन चरित या आख्यान निरूपण के कारण वीर, हास्य, शांत आदि अन्य रसों का भी समावेश हुआ है।

जैन संतों एवं कवियों और निर्गुण संत कवियों का उद्देश्य समाज कल्याण था। गुजराती संतों ने स्वयं को कवि कहलाने की आवश्यकता नहीं समझी। अत: काव्य शास्त्रीय नियमों का पालन न कर जनभाषा में साहित्य रचा। इन्होंने प्रबन्ध काव्यों की अपेक्षा मुक्तकों की रचना की है। फिर भी इनकी रचनाओं में शांत, शृंगार, करुण, अद्भुत, हास्य, वीभत्स आदि सभी रसों का समावेश हो गया है। जैन सन्तों एवं कवियों का उद्देश्य विभिन्न काव्य रूपों में रचना कर जनता को उपदेश देना रहा है। अत: उनकी काव्य-रचनाओं में भी शृंगार, शांत, करुण आदि विभिन्न रस मिलते है। गुजराती सन्तों का मुख्य रस शांत रस रहा है।

शृंगार रस

'रसराज' शृंगार का स्थायी भाव रति है। वैष्णव कवियों ने राधा-कृष्ण और कृष्ण-गोपी की लीलाओं का शृंगारिक चित्रण किया है। गुजरात के संतों ने आत्मा-परमात्मा के दाम्पत्य भाव के रूपकों द्वारा संयोग और वियोग शृंगार का निरूपण किया गया है।

संयोग शृंगार

प्रीतम ने कृष्ण गोपी-प्रेम का वर्णन बड़े उल्लास से किया है। कृष्ण को विवश करने के लिए गोपियों की बरजोरी दृष्टव्य है-

''काहुने मोरली लिनी मरोरी, लीयो है पीताम्बर छीन।
काहुने आँख आंज लालन कि, काहु मुख चुमन कीन।
गावत गारि बजावत तारी, हो हो हो रे कहांन।
जब राधाजी के पेयां परोगे, तब ही पाबोगे ज्यांन ॥'' (30)

कवि मालदेव ने 'स्थूलिभद्रफाग' में कोशा वेश्या के रूप-सौन्दर्य का वर्णन इस प्रकार किया है-

''विकसित कमल नयन बनि, काम बाण अनिया रे।
खांचइ ममुह कमान शुं, कामी मृग-मन आरि रे ॥39
कानहि कुंडल धारती, जानु मदन की जाली रे,
स्याम भुयंगी यूं वेणी, यौवन धन रषवाली रे ॥''(31)

वियोग शृंगार

कृष्ण के विरह में वर्षा ऋतु में छाए बादल, पपीहे की पिहु-पिहु, मोर और कोयल की कूक, गोपी की विरह-व्यथा को बढ़ा देती है। वहीं संत-काव्य में आत्मा की विरह-व्यथा को प्रकृति-सौन्दर्य, पशु पक्षी आदि के उद्दीपनों द्वारा अभिव्यक्ति मिली है।

दयाराम ने गोपी की विरह-व्यथा को इन पंक्तियों में अभिव्यक्त किया है-

''अेक श्रावन मेरे आंगन बरषे, दुज्यो सावन दृग टबके नीर,
आवन की आली अवध बीत गयी, बीकल भयो मन धरे न धीर,
केहे भटु अब कब ज्यों मीलेंगे, दया को प्रीतम बल को बीर।।''(32)

वस्तो विश्वभंर का रोम-रोम प्रभु से दर्शन के लिए जल रहा है-

''रोम रोम में विरह लगा, अन्य कंशु न सुहाय।
'वस्ता विश्वभंर' जब मळे, तन मन शीतल थाय।।''(33)

शांत रस

मध्यकालीन संतों की वाणी में शांत रस की प्रधानता है। वैष्णव एवं विभिन्न सम्प्रदाय के कवियों ने भी शांत रस से सिक्त काव्य-रचनाएँ की हैं। तत्त्व ज्ञान, संसार की असारता, सांसारिक पदार्थों की असारता तथा परमात्मा के स्वरूप का ज्ञान होने पर, देह की नश्वरता, आत्मज्ञान, आत्म-निवेदन आदि में शांत रस की उत्पत्ति होती है।

दयाराम के अनुसार दुखी को अपना दुख और सुखी को अपना गर्व दूर करने के लिए दोनों को क्रमशः अपने से अधिक दुखियों को तथा सुखियों को देख कर शांतिपूर्वक जीवन व्यतीत कर देना चाहिए-

''सुख-दुख पचवन दोह को, ये ही है उपचार।
अधिको लखिये आप तें, क्लेश गर्व संहार।।''(34)

ब्रह्मानन्द स्वामी भी दुनिया के भौतिक ऐश्वर्यों को छोड़ कर हरि-चरणों का जाप करने पर बल देते हुए कहते है-

''छोड़ दुनिया के मजे, सब बैठकर एकान्त में।
ध्यान धर हरि के चरण का, फिर जनम नहीं आयेगा ॥
दृढ़ भरोसा करके मन में, जो जपे हरिनाम को।
कहते हैं 'ब्रह्मानन्द', ब्रह्मानन्द बीच समायेगा ॥'' (35)

वीर रस

संतों द्वारा मन और इन्द्रियों को वश में करने तथा साधना के प्रयासों में सेना, सिपाही, तोप युद्ध आदि के रूपकों में वीर रस की झलक मिलती है। रविसाहब का वीर रस से परिपूर्ण एक पद दृष्टव्य है-

''मैं सिपाही सद्गुरु साहेब का, लड़ूँ तोप बख्तर पहेरी,
शील, संतोष का बख्तर पेहरुँ, लऊँ शमशेर सतगुरु केरी,

o o o

आदु राज ने आदु दुहाई, होइ छाप पादशाही केरी,
कहे रविदास सद्गुरु के आगे, मांगुं मौज चाकरी तेरी।''(36)

-रविसाहब

जैन कवि चन्द्रकीर्ति कृत 'जयकुमार आख्यान' में जयकुमार और अर्ककीर्ति के बीच युद्ध का एक प्रसंग वीररस से परिपूर्ण है-

''हस्ती हस्ती संघाते आथंडे,
रथो रथ सूभट सहू इम भडे।
हय हयारव जब छजयो,
नीसांण नांदे जग गज्जयो ॥''(37)

आख्यान काव्यों तथा चरित काव्यों में शृंगार और शांत रस के अतिरिक्त वीर, रौद्र, करुण आदि रसों का भी निर्वाह हुआ है। संत-काव्य का प्रमुख रस शांत रस है। परन्तु

देह की नश्वरता एवं नारी-निंदा में जुगुप्साजनक वर्णन होने से वीभत्स रस का भी समावेश हो गया है। हास्य, अद्भुत करुण आदि अन्य रसों का समावेश भी संतकाव्यों में हुआ है।

छन्द

गुजरात में मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में बारहवीं शती से आज तक विविध प्रयोग हुए है। इस काल में मुख्यत: आख्यान, पद तथा मुक्तक शैली का प्रयोग हुआ है। ईसरदास, सायांजी आदि द्वारा रचित चरित काव्य; अखा, मीराँ, कृष्णदास आदि कवियों द्वारा रचित पद एवं मुक्तक काव्यों की रचना मिलती है।

आख्यान शैली में रचना 'कडवाबद्ध' होती है जो एक प्रकार की छन्द योजना है। इसमें प्रारम्भ में दो पंक्तियों का मुखबन्ध (1 पद) उसके बाद 'ढाल' और अन्त में दो पंक्तियों का 'वलण' (1 पद) होता है।[38]

पद शैली में विभिन्न छन्दों जैसे- सार छन्द, ताटक छन्द विष्णुपद छन्द, उपमान छन्द, समान सवैया, सरसी छन्द, झूलना आदि का प्रयोग होता है। पदों में गेयता होती है।[39]

गुजरात के प्राय: सभी संतों ने तलपदीय पदबन्धों (देशियों) के साथ दोहा, चौपाई, सोरठा, कुंडलिया, छप्पय, सवैया, झूलणा, हरिगीतिका, सुमुखि, दुर्मिल, घनाक्षरी कवित्त, अरिल्ल, भुजंगी, मनहरण, गजल, लावणी, कवित्त आदि विविध छन्दों का प्रयोग किया है। गुजरात के हिन्दी संतों की प्रवृति मात्रिक छन्दों की ओर अधिक दिखाई देती है।

जैन कवियों का समस्त काव्य छन्दोबद्ध है। उन्होंने अपनी काव्य-रचनाओं में मात्रिक और वर्णिक दोनों छन्दों का प्रयोग किया है। अधिकांश गुजराती जैन कवियों ने दोहा, चौपाई, सोरठा, कवित्त, कुंडलियां, सवैया, छप्पय, हरिगीतिका आदि छन्दों का प्रयोग किया है।

वैष्णव कवियों ने विभिन्न छन्दों से युक्त तथा राग-रागनियों से बद्ध काव्य-रचना की है। इन्होंने दोहा, चौपाई, छप्पय, कुंडलिया, सोरठा, अरिल्ल, नराच, दण्डक, मत्तगयंद, हरिगीतिका, रोला, दुवैया, कवित्त आदि विभिन्न छन्दों में काव्य-रचना की है।

दोहा

जिसके प्रथम और तृतीय चरण में 13-13 मात्राएँ तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण में 11-11 मात्राएँ होती हैं, उसे दोहा कहते है। विषम चरणों के आदि में जगण (।ऽ।) नहीं होना चाहिए।

''सर्वातीत सब जा विषे, सब समेत सब शून्य,
स स्वरूप स्फुरत भयो, सोहि ज्ञान नहिं नून्य।''-अखा[40]

सोरठा:

इसमें 11 और 13 के विराम से कुल 48 मात्राएँ होती हैं। विषम चरण (पहले

और तीसरे) में तुक मिलती है।

''प्यारे चित्त विचार ले, तुं कहां से आया।
बेटा बेटी कवन हे, किसकी यह माया ॥1॥–ज्ञानानन्द[41]

कवित्त:

इसमें 16 वर्णों के बाद यति और अन्त में एक गुरु है। किशन दास कृत 'उपदेश बावनी' मनहरण कवित्तों में की गई एक श्रेष्ठ रचना है। मुकुन्द गुगली का एक उदाहरण दृष्टव्य है–

''धर्मनको ध्यान धारी, कबीर की कथा सारी;
कहने को मति मारी, चहु दिश लग्गी है।
जाको प्रताप भारी, घरी मैं हरि उच्चारी;
जबान जाप्पे प बानी, दूजी सु न रग्गी है।
अद्वैत पद को मानी, सत्य ब्रह्म मन जानी;
धर्मको न ध्यान आनी, ज्योत वासे जग्गी है।
'मुकुन्द' आनन्द कंद, जाने नहीं कोऊ छन्द;
वैसे ही जानो प्रबन्ध, कृपा संग मग्गी है ॥''[42]

छप्पय

कुण्डलिया छन्द की भाँति इसमें छः पाद होते है जिसके प्रारम्भिक चार पाद रोला छन्द के और अन्तिम 2 उल्लाल के। धर्मवर्द्धन की 'छप्पय बावनी' छप्पय छन्द के उदाहरण है। इस छन्द का एक उदाहरण देखिए–

''गुरु चोवीश के लक्ष, पक्ष सब मत सें न्यारो।
जा मांही अनुभव ज्ञान, भक्ति वैराग्य विचारो।
दत्त यदु संवाद, अनुपम एकादश माहीं।
जेही जानत भव शोक, काल गुण कर्म न साही।
ऐसी यह अद्‌भुत कथा, यथा मति ही जान ही।
श्री गुरु चरण जब उर बसे, 'मूलदास' कथा बखान ही ॥''[43]

–मूलदास

चौपाई

जिसमें 16 मात्राएँ हों, अन्त में जगण अथवा तगण न हों। समकल के बाद समकल हो, विषमकल के बाद विषमकल हों, उसे चौपाई छन्द कहते हैं।

''गुरु गोविन्द दो एक स्वरूपा, नाम रूप गुन भेद अनूपा।
गुरु अविचल पूरण पद धामा, गुरु स्वामी गुरु जग विश्रामा।''[44]

–रविसाहब

कुण्डलिया

इसमें छः पाद होते हैं और प्रत्येक पाद में 24–24 मात्राएँ होती है। दोहे का पूर्वदल कुंडलिया का प्रथम पाद, उत्तर दल द्वितीय पाद, अंत में रोला के चार पाद होते हैं। कुंडलिया छन्द के प्रथम और अन्त का पद एक सा होता है। दीनदरवेश की कुंडलियाँ अति प्रसिद्ध हैं।

''हिन्दू कहें सो हम बड़े, मुसलमान कहें हम्म,
एक मूंग दो झाड़ है, कुण ज्यादा कुण कम्म।
कुण ज्यादा कुण कम्म, कभी करना नहिं कजिया,
एक भगत हो राम, दूजा रहिमान सो रजिया,
कहै दीन दरवेश, दोय सरिता मिल सिन्धू,
सबका साहब एक, एक मुसलिम एक हिन्दू।''

–दीन दरवेश[45]

हरिगीतिका

इसमें प्रत्येक चरण में कुल 28 मात्राएँ होती हैं अंत में लघु–गुरु होते है तथा सोलह और बारह मात्राओं पर विराम होता है।

''प्यारहुं निर्खये एक द्रव्यें, कहे श्री जिन आग में,
जिउं नाम घटत संठाण थापन, द्रव्य मृद गुन भाव में।
यो जीव द्रव्यह केवलादिक, गुनह द्रव्यत भावते,
होइ नियम पुद्गल द्रव्य को, तो मन नहीं व्याभिचारतें।''

–यशोविजय जी[46]

उपरिलिखित उदाहरणों से स्पष्ट है कि गुजरात के मध्यकाल में छन्द प्रधान रचनाएँ लिखी गई। यहाँ के हिन्दी कवियों ने मात्रिक एवं वर्णिक – दोनों प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया। देवासाहब, रविसाहब, मोरार साहब, प्राणनाथ आदि ने चौपाई छन्द में हजारों की संख्या में रचनाएँ की। अनेक कवियों ने दोहा–लेखन के विभिन्न रूपों को अपनाया है। शेख अहमद खट्टू, सैयद मुहम्मद जौनपुरी, शेख बहाउद्दीन बाझन आदि सूफी कवियों ने गूजरी दोहे लिखे हैं। अनेक कवियों ने अपने ग्रंथ मात्र दोहों में ही रचे हैं, जैसे कृष्णदास कृत 'ज्ञानप्रकाश'।

दयाराम कृत 'दयाराम सतसई' में 700 से अधिक दोहों का संग्रह है। देवासाहब, हरिसिंह ठाकुर, मुकुन्द गुगली, चरणदास आदि ने कवित्त छन्द में रचनाएँ की है। अखा और दीनदरवेश की कुण्डलियाँ भी जग प्रसिद्ध हैं। अखा, प्रीतम, निरान्त, दयाराम आदि गुजरात के अनेक कवियों ने विपुल परिमाण में साखियाँ लिखी हैं। रेणकी आदि छन्दों में निबद्ध देवासाहब, देवीदानदेथा, स्वामी नारायण सम्प्रदाय के ब्रह्मानन्द की रचनाएँ तथा चांदरणा छन्द में बद्ध लालदास जी की रचनाएँ उल्लेखनीय हैं।

सारांशत: गुजरात में मध्यकालीन भक्ति एवं रीतिपरक हिन्दी साहित्य में छन्दोबद्ध रचनाओं का बोलबाला रहा।

अलंकार विधान

अलंकारों के प्रयोग से काव्य-सौन्दर्य में अभिवृद्धि होती है। कथ्य की अभिव्यक्ति को सौन्दर्य प्रदान करने के साथ-साथ कवि की कल्पना शक्ति के परिचायक होते हैं। काल्पनिकता के सहारे कविता की प्रभावशाली अभिव्यक्ति में अलंकार सहायक होते हैं। गुजरात के संत-भक्त कवियों ने अपनी काव्य-रचनाओं में विभिन्न अलंकारों का प्रयोग किया है। मध्यकालीन संतों की अपेक्षा सगुण भक्त कवियों, उत्तरमध्यकालीन कवियों ने अर्थ-सौन्दर्य बढ़ाने हेतु अलंकरों के अधिक प्रयोग किये हैं। संत-वाणी में परोक्ष रूप से अलंकारों का प्रयोग हुआ है।

शब्दालंकार

अनुप्रास:

''हरि भगतीहि छांहितो, मुकति मुकति बत पाय।
हरि भगति ही छांहतो, मुकती मुकती बत पाय।।564।।''

–दयाराम[47]

''जीवन जरासा दुख जनम जरा सा तापैं।

o o o

ऐसा सा तापै किशन अनन्त आसा
पानी में बतासा तैसा तनका तमासा है।।30।।''[48] *–किशनदास*

यमक

''शिखार सूत्र कों डार के रे, शिखा सूत्र पुनि धार।

o o o

कनक कामनी छाँडके रे, कनक कामनी पास।''

–मनोहर[49]

''रतिबिन रस सो रसहिसों, रतिबिन जांन सुजान।
रतिबिन मित्र सुमित्रसों, रतिबिन सब शब मांन।।71।।''[50]

–दयाराम

वीप्सा

''चहुंदिश चित चमकत आपनयों, दामिन सी दमकाई।
घोर-घोर गजरत घन घेहरा, सतगुरु सेन बताई।''

–अखा[51]

अर्थालंकार

उपमा

''मान किया भली करी। जान तिहारो सान।।
जैसो कनका ओस को। ऐसो तिहारो मान।।''

–जीवणदास[52]

''सुख पावें की दुख लहें, लगी डगें नहिं प्रीति।
लपटि वृक्ष जिमि वल्लरी, छुटी न कबु यह रीति''।।117।।

–दयाराम[53]

''पूरण चन्द्र जिसौ मुख तेरो, दंत पंक्ति मचकुन्द कली हो।
सुन्दर नयन तारिका शोभित, मानु कमल दल मध्य अली हो।।''

–समयसुन्दर[54]

रूपक

''काष्ट अग्नि संजोगते, धुवां प्रगट ज्युं होय
जड़ चेतन बीच कल्पना, जीव कहावत सोय''–छोटम[55]
''ज्ञान को जहाज बंधावों भाई!
उन बैठत नालगे काई! ज्ञान को0 1''–लालदास[56]
''चलो अगम के देस, काल देखत डरे;
वहाँ भरा प्रेम का हौज, हंस केल्यां करे–''

–मीराँबाई[57]

सांगरूपक

''ज्ञान–घटा चढ़ आई अचानक, ज्ञान–घटा चढ़ आई।

अनुभवजल बरसा, बड़ी बुंदन, कर्म की कीच रेलाई।''

–अखा[58]

''मैं हूँ आदि अनादि, आ तो सर्वे उपाधि।
सद्गुरु मिलिया अनादि, मिट गई सर्व उपाधि।
कहाँ काष्ट ने कहाँ कुलहाडा, कहाँ है घडनन हारा,
जबतें मोये सद्गुरु मिलिया मिट गई सर्वे चाला।''

–निष्कुलानन्द स्वामी[59]

दृष्टान्त

''प्रेमनेम यह वह लहें दहें मन्न निति देह।
बरे बिना दीपहु न ज्यों, पावत पिवन सनेह''।।131।।

–दयाराम[60]

''वापी, कूप, तड़ाग के, नीर भिन्न नव होय।
कहे 'प्रीतम' एक आतमा, ज्ञान दृष्ट करी जोय।।''

–प्रीतम[61]

श्लेष

''अब नरसिंह समान भयो, अब बन को उजरायो।''

–नरसिंह महेता[62]

''खग सुखाहन ईस विभु, हरि प्रिय रिपु सारिंग।
ऐसे हैं द्विजराज शुभ, कंचन वरन सुअंग।।''

–दयाराम[63]

विभावना

''आनन्द दहेली उभराणी, संतो। आनन्दहेली उभराणी।
चन्द्र-सूरज तो वा घर नहीं, नहिं पवन नहिं पाणी।
अष्ट कुल पर्वत उस घर नाहीं, नहीं वेद नहीं वाणी।''

–भादुदास[64]

उदाहरण

''मान सीख मेरी व्हैगी ऐसी गति तेरी यह
जेसी मूठी ढेरी रास की मसान में॥

–किशनदास[65]

"जनम मरण सो संत मिटावे, जैसे मिटें रोग औषध से।
जड़ चैतन्य में रह्यो हे पूरी, जैसे वास पुष्प के मध सें।"
-रत्नो भगत[66]

निदर्शना

"प्रेम गली है ऐसी रे, सिर साटे पग देसी रे।
o o o
प्रेम खेल है ऐसा रे, सो सिर जात अंदेसा रे।"-अखा[67]

उत्प्रेक्षा

"तनु शुध खोय घूमत मन एसें, मानु कुछ खाई मांग।"
-आनन्दघन[68]

विरोधाभास

"बानिक नटवरलाल की लिखत तोष दिन रैंन।
पान करैं प्यासे मरैं, वनचर त्यों मम नैंन"।।98।।-दयाराम[69]
"चन्द उजारा जगि किया मेरइ मनिहुर अंधियार।"
-जयवंतसूरि[70]

गुजराती संत एवं भक्त कवियों की काव्य-रचनाओं में उपरोक्त अलंकारों के साथ-साथ विशेषोक्ति, प्रौढ़ोक्ति, काव्यलिंग, स्वाभावोक्ति, कारणमाला, अतिश्योक्ति आदि अनेक प्रकार के अलंकारों का प्रयोग हुआ है। गुजरात में संत-काव्य की रचना के समय रीतिपरक ग्रंथों की रचना होने से चमत्कारमूलक उक्ति-वैचित्र्य और चमत्कारमूलक अलंकारों का भी यहाँ-वहाँ प्रयोग मिलता है।

भाषा

गुजरात में मध्यकाल में वैष्णव भक्त कवियों ने ब्रज भाषा में काव्य-रचना की। गुजरात के सम्प्रदायबद्ध और सम्प्रदाय निरपेक्ष दोनों प्रकार के कवियों द्वारा विपुल पदों की रचना ब्रजभाषा में हुई है।सन्तों ने अपनी भाषा को सधुक्कड़ी कहते हुए जन प्रचलित भाषा में काव्य-रचना की। इसके अन्तर्गत खड़ी बोली, ब्रज भाषा, अवधी, राजस्थानी आदि का समावेश हो जाता है। बाहर से आकर बसे हुए सूफीमत के कवियों ने अरबी, फारसी, तुर्की के शब्दों का जनभाषा के साथ मिलान कर अपने धर्म का प्रचार तथा काव्य-रचना की जिसे उन्होंने 'गूजरी' भाषा की संज्ञा दी। मध्यकाल में गुजरात के कवियों द्वारा हिन्दी की विभिन्न शैलियों में काव्य-रचना की गई।

चारणी कवियों की रचनाओं में डिंगल भाषा का प्रभाव देखा जा सकता है। अधि-कांश जैनकाव्य भ्रमण करते जैन साधुओं द्वारा रचित होने के कारण विभिन्न प्रदेशों की भाषाओं का भी सहज रूप से काव्य-रचनाओं में समावेश हुआ है। सांस्कृतिक आदान-प्रदान तथा दूरस्थ क्षेत्रों के विभिन्न भाषा-भाषी राज्यों-प्रदेशों से आने वाले प्रवासियों की भाषा का प्रभाव स्थानीय लोगों की भाषा पर पड़ा। गुजरात में हिन्दी में काव्य-रचना करने वाले कवियों की रचनाओं की भाषा पर भी हिन्दी की विभिन्न बोलियों-उपबोलियों, दूसरी भाषाओं आदि का प्रभाव पड़ा।

गुजरात के मध्यकालीन हिन्दी कवियों द्वारा प्रयुक्त हिन्दी की विभिन्न शैलियों के उदाहरण मिलते है। भाषा की दृष्टि से उन्होंने अनेक प्रयोग किये-

ब्रज भाषा

गुजरात के वैष्णव भक्त कवियों ने ब्रज भाषा में काव्य-रचना की है। दयाराम द्वारा ब्रजभाषा में साहित्य-रचना की गई क्योंकि यह ब्रजराज (कृष्ण) की भाषा है।[71] दयाराम द्वारा रचित काव्य का एक उदाहरण दृष्टव्य है-

''तनक बुराई तुरत भल, जामें अति परिनाम।
कंठ कटे कटु ना कहे, सो न सयानो काम।।''[72]

अन्य कवियों की भाषा में भी ब्रजभाषा का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है-

''अंजलि के जल ज्यों घटत पल पल आयु,
विष से विषम व्यवसाय विष रस के।
पंथ को मुकाम कछु बाप को न गाम यह,
जैबो निज धाम तातें कीजे काम यश के।''

-किशनदास[73]

''मत कहो मात रीसानी, बोले यह अपराध हमारो,
घर में रहे सदा गुन सागर, कोमल कुंवर तम्हारो।''

-केशवदास कायस्थ[74]

खड़ी बोली

''वैराट का फेर उलटा, मूल है आकास।
डारें पसरी पाताल में, यों कहे वेद प्रकास।।''[75]

-संत प्राणनाथ

''एक दिन भारत यह सब सरताज था,

जिस जमाने में यहाँ पर राज था।''(76)

–मुरार

''ये दुनिया के लोग कीड़े मकोड़े,
गेहूँ शहद पर दौड़ते पोडे। डूबते बहुत निकलते थोड़े।''(77)

–सैयद शाह हाशिम

फारसी

'एकादरे मुतलक तुई, दादार जहानी,
दानी तो हमेरा ततुरानीं जातो दानी।
आलम हमें नाबूद जतो बूँद नुमायद
हर मुरदेरा तो मेकुनी जी रूह वफानी।।''(78)

–मनोहर स्वामी

''व लाल हुम्मा ऐयून, खारज बला दखल।
वल हुम्म लेस इगन्, व ल हुम्म लेस अकल।।''(79)

–प्राणनाथ

राजस्थानी

गुजरात के निकटवर्ती प्रांत की भाषा होने के कारण इस भाषा का प्रभाव भी यहाँ के कवियों की रचनाओं पर दिखाई देता है-

''गबरी चित्त में चेतिये, सुं सुतो उठ जाग।
आलस निद्रा परहरो, हरि भजन को लाभ।।''(80)

–गबरीबाई (चित्त चेतन को अंग)

''निशदिन जोऊं तेरी वाटडी, घेरे आवो रे ढोला।।
मुझ सरीखा तुझ लाख है, मेरे तुं ही अमोला।।''(81)

–आनन्द घन

''मन बसे तेम तूं मांहरे मो मन बसियों महमहण।''(82)

–ईसरदास

पंजाबी

नानक आदि पंजाबी संतों द्वारा गुजरात में की गई धार्मिक यात्राओं या तत्कालीन लोकरुचि के प्रभाव के कारण–गुजरात के कवियों पर खड़ी बोली, राजस्थानी के साथ पंजाबी भाषा का प्रभाव भी पड़ा है-

''हो कांना किन गूँथी जुल्फां कारियाँ।''[83]

–मीराँबाई

''कीडी खावे खांड कु, रविदास झीड़ी होय।
जो मन को गल कीजिये, तो हाथ न आवे कोय।।''[84]

–रविसाहब(सूक्ष्म शिखामण कौ अंग)

''दादू प्याला नूर दा, आसिक अरसि पविति
अठे पहर अल्लाह दां, मुँह दिट्ठे जीवंति।
दादू के ते कहि गये, अन्त न आवे और।
हमहूँ कहतें जात है, केते कहसी होर।।''[85]

–दादू दयाल

सिन्धी

''रे पिरीअम, मंगां सो लाड करे।
हेडी किज कां मुदसे, खिलंदडी लगा गरे।''[86]

–प्राणनाथ

''हालु असां जो लाय रे, तोहैं सब मालूम रे,
मझे खमां मझे बरां अला मझे लागी बहिरे।''

–दादू दयाल[87]

मराठी

''मूल स्थानी मिउ बंध बांधो, हो जोई ना काल कलाई।
गुरु वचने उठियाना दृढ़ बंधाई, जे वीना चंचल नाहीं।''[88]

–चक्रधर

''गोब्चंद गोजारे तुम्हे अम्हचांह गुरु, तुम्हे अम्हचा ग्यान
तुम्हे अम्हचाह देव, तुम्हे अम्हचां ध्यान।।''[89]

–दादू दयाल

जाटी भाषा

''एक घोर अंधेरी आंखा नहीं, और ठौर नहीं बुधमन।
विषम जल ऐसे मिने, पीउ आए मुझ कारन।।''[90] –प्राणनाथ

अरबी

''अस्मा हिंद मुस्लिम, अनी कमल सिदक।

मा कलम अनी किजबो, मा कुम्म कलमा हक।।''[91] –प्राणनाथ

गुजराती

''रझल रझल राजे मुए पे ठरे न ऐकु ठुर,
हजू लगी कही नां करे मनमां मतलब नुर ॥''[92]

–राजे

''परमेसर शुं प्रीतडी रे, किम कीजे किरतार,
प्रीत करंता दोहिलि रे, मन न रहे खिण एकतार रे,
मनडानी वातो जोज्यो रे, जुजुईधातो रंग बिरंगी रे,
मनडुं रग बिरंगी ॥1॥''

–आनन्दवर्द्धन[93]

कच्छी

''स्वस्थ तां सौ को करे, परमारथ करे न कोय,
हथो छड़े मसाड़ में, कुवाडो छड़े न कोय।''

–मेकनदादा[94]

उर्दू

''गफलत में गाफिल रह्या, हरि कुछ जान्या नाहे।''

–रविसाहब[95]

गूजरी

''जिसे इश्क का तीर भारी लगे।
उसे जिन्दगी क्यों न भारी लगे।।
न होवे उसे जग में हरगिज करार।
जिसे इश्क की बेकरारी लगे।।
वली कों कहे तूं अगर एक वचन।
रकीबों के दिल में कटारी लगे।।''[96]

–वली मुहम्मद

''सुंनो मत्लब रही अब यों अर्मी का,
लिखे गूजरि मने युसुफ–जूलीखा।''[97]

–मोहम्मद अमीन

गुजरात के मध्यकालीन कवियों की हिन्दी रचनाओं पर विभिन्न भाषओं तथा

भाषा-शैलियों का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। इन कवियों की रचनाओं में संस्कृत के तत्सम, अर्द्ध तत्सम, तद्भव, देशज और तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों के कारण प्रचलित हुए अरबी-फारसी-उर्दू भाषाओं के शब्दों का कुशल प्रयोग मिलता है।

विदेशी शब्दों के साथ-साथ गुजराती के ठेठ शब्दों तथा परिमार्जित शब्दों का भी उसी कुशलता से प्रयोग इन कवियों ने किया है।

इन कवियों ने अनेक स्थानों पर दीर्घ मात्रा के स्थान पर ह्रस्व मात्रा तथा ह्रस्व मात्रा की जगह दीर्घ मात्राओं का प्रयोग किया है।

गुजरात के मध्यकालीन कवियों ने अपनी काव्य-रचनाओं को प्रभावोत्पादक तथा सहज ग्राह्य बनाने के लिए मुहावरों-कहावतों का सफल प्रयोग किया है। मांडण कृत 'प्रबोध -बत्तीसी', किशनदास की 'उपदेश बावनी', अखा के 'छप्पा' आदि में मुहावरों-कहावतों का सफलतापूर्वक प्रयोग हुआ है। गुजरात के संतों और भक्त कवियों की हिन्दी काव्य-रचनाएँ अनेक मुहावरों ओर कहावतों से सुसज्जित हैं। इन कवियों द्वारा प्रयुक्त कुछ मुहावरे और कहावतें उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं-

1) *''क्या कोई कहेवे? समुझे कैसा?*
हथ कंगन को दर्पण जैसा।''

-अखा[98]

2) *''चार दिनांकी चाँदनी हेगी, पाछे अंधार बतावे।।''*

-ज्ञानानन्द[99]

3) *''अंबु मां नहीं आंतरो, व्योम विषे नहिं ताड''*

-प्रीतमदास[100]

4) *''बोये बबूल के बीज तांकु, अब फल कहाँ से पावे रे।''*

-गवरी बाई[101]

5) *''राजे रघुवर जानकी जीवने प्राण आधार*
इस बीनी मोकू लगे सुना सब संसार''

-राजेभगत[102]

6) *''ज्ञानी कहै क्या देखे गमारा, सब ही मंगल विद्या साजी।*
मगन भयो धर्मसीख न मांनत, जो मन तो क्या करे काजी।।''

-धर्मवर्द्धन[103]

7) *''विरही ताती आतमा, आठो पहर उदास*

कहे प्रीतम लोचन लगे, श्रावण भादो मास।''

–प्रीतमदास[104]

8) ''आपकी सबई बात और की न भावे देखी,
आपकुं अधिक मानी मूछ मुरडाइ के।''

–हरिसिंह[105]

संगीत

गुजरात के मध्यकाल के काव्यरूपों के विकास पर लोक प्रचलित गीतों और संगीत-शास्त्र का प्रभाव दिखाई देता है। मध्यकालीन कवियों ने जनता को आकृष्ट करने के लिए गेय पद्धति अपनाई।

कृष्णदास अधिकारी, आदित्यराम, बैजु बावरा, मीराँबाई, भालण, गिरधर, त्रिकमदास, नरसिंह महेता, दयाराम आदि वैष्णव कवि अपने पद, भजन, कीर्तन विभिन्न राग-रागिनियों में बद्ध कर गा-गाकर सुनाते थे। बैजु बावरा, दयाराम आदि अनेक वैष्णव कवि शास्त्रीय संगीत के ज्ञाता थे। शेख बहाउद्दीन 'बाझन', वली मुहम्मद, काजी महमूद दरियायी जैसे गूजरी कवियों ने शायर-संगीत की विविध गान-पद्धतियों एवं राग-रागिनियों पर आधारित काव्य-साहित्य लिखा।

गुजरात के स्वामी नारायण सम्प्रदाय के ब्रह्मानन्द आदि कवियों ने भी सैकड़ों संगीतात्मक पदों की रचना की है। जैन कवि आनन्दघन तो राग-रागिनियों के पंडित थे। मालदेव, जिनहर्ष, धर्मवर्द्धन, समयसुन्दर आदि जैन कवियों ने प्रसिद्ध देशियों, ख्यालों, तर्जो आदि का प्रयोग अपनी रचनाओं में किया।

गुजरात के संतों को शास्त्रीय संगीत का ज्ञान नहीं था फिर भी संतवाणी लोगों को प्रभावित करती है। संतों ने लोक-कंठ में गूँजने वाली विभिन्न प्रचलित राग-रागनियों, तालों एवं लोकधुनों के आधार पर अपने पदों, भजनों, कीर्तनों, गरबा-गरबियों एवं ग़ज़लों की रचना की है।

गुजरात के मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में बसन्त, मल्हार, विहाग, सोरठ, दीपक, बिलावल, केदार, टोड़ी, सारंग, जयजयवन्ती, आसावरी, भीम पलास, प्रभात, सांभेरी, नट, मालकोस, मारू, सदर, होरी, भैरव, रामकली, ठुमरी, विभास, पूर्वी, खमांज, सोहिणी, संकेत, काफी मेवाड़ा आदि विभिन्न राग-रागिनियों तथा कहरवा, एक ताल, तीन ताल, चौताल, झपताल, हींच, दादरा, रूपक, धमार आदि विभिन्न तालों का प्रयोग मिलता है। कहीं-कहीं लोकधुनों, लावणी-पवाडा शैली, ख्याल-नौटंकी शैली का भी प्रयोग हुआ है।

उदाहरणार्थ विभिन्न तालों एवं रागों में बद्ध कुछ पद दृष्टव्य है-

राग मल्हार

''मे केसे करूं पीया बसे मधुपुर जाय,
मेरी तो कछयुं लेहे न पीर। मे केसे करूं....
अेक श्रावन मेरे आंगन बरषे, दुज्यो सावन दृग टबके नीर,
आवन को आली अवध बीत गयी, बीकल भयो मन धरे न धीर
केहे भटु अब कबज्यों मीलेंगे, दया को प्रीतम बल को बीर।।''(106)

–दयाराम

राग सोरठ–ठुमरी

''सामलिया तोरे सरने आये की लाज।
मैं अवगुनकारी, ना गुन–सागर, मेरा गुनाह बख्सो ब्रजराज।''(107)

–गवरीबाई

राग सांरग–आसावरी

''अब हम अमर भये, न मरेंगे।
या कारण मिथ्यात दियो तज, क्यूं कर देह धरेंगे।
राग–दोस जगबंध करत हैं, इनको नास करेंगें।
मर्‌यो अनंत काल तें प्राणी सो हम काल हरेंगे।''(108)

काव्यरूप

गुजरात में मध्यकाल में अनेक काव्यरूप प्रयुक्त हुए है। प्रबन्ध, चरित्र, संवाद, आख्यान, कथा, वार्ता, कक्का, वार, तिथि–मास, फागु, धमाल, होरी, बारहमासा, चौमासा, अष्टक, बीसी, चौबीसी, बत्तीसी, छत्तीसी, बावनी, बहोत्तरी, शतक, सतसई, रास, चौपाई अथवा चतुष्पदी, गज़ल, छन्द कुण्डलियाँ, छप्पय, दोहा, सवैया, भजन, पद, टप्पा, ख्याल चाबखा, साखी, सबद, रमैनी, गीता, विवाहलो, घोल अथवा मंगल गीत, आरती, प्रभाती, जकडी, झूलना, ठुमरी, भक्तमाल, परिचयी, प्रश्नोत्तरी, गरबा–गरबी, लावणी, मसनवी, मरसिया, कसीदा, बेत आदि विभिन्न काव्यरूपों का प्रयोग मध्यकालीन हिन्दी काव्य–साहित्य में मिलता है।

इन काव्यरूपों में दयाराम की गरबियाँ, धीरा की काफियाँ, प्रीतम के पद, गिरधर के भजन, निरांत की साखियाँ, अखा के छप्पे, भोजा भगत के चाबखे, सूरत के शिवानन्द की आरतियाँ, दीन दरवेश की कुण्डलियाँ, खीम साहब की 'खीम–रवि–प्रश्नोत्तरी', अनवर और सागर की ग़ज़लें विशेष प्रसिद्ध है।

आधुनिक काल

आधुनिक हिन्दी काव्य-साहित्य निरन्तर विकसित होता रहा है। साहित्य की अन्य विधाओं की भाँति हिन्दी-काव्य में युगानुरूप कथ्यगत और शिल्पगत परिवर्तन स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। आधुनिक काव्य-साहित्य आधुनिक चेतना-युक्त है। भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, स्वच्छंदतावाद, छायावाद, प्रगतिवाद से प्रयोगवाद और नयी कविता के रूप में आधुनिक चेतना का काव्य विकसित हुआ है। स्वतन्त्रता के पश्चात् राजनैतिक गुलामी को छोड़ मानसिक गुलामी से मुक्ति की कविताएँ लिखी जा रही हैं।

भावपक्ष

आधुनिक काव्य-साहित्य में वर्तमान विद्रूप समाज-व्यवस्था, पूंजीवाद का शोषण-चक्र, भ्रष्ट राजनीति और राजनीतिज्ञों की स्वार्थान्धता, साम्प्रदायिक कट्टरता आदि समसामयिक परिस्थितियों का चित्रण हुआ है। आधुनिकीकरण की देन यांत्रिकता से उपजा महानगरीय संत्रास, हृदयहीनता, आम आदमी का एकाकीपन तथा अजनबीपन, रिश्तों की टूटन आदि जटिलताओं की अभिव्यक्ति आधुनिक कविता में हुई है।

आधुनिक काव्य में प्रकृति का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आधुनिक हिन्दी-काव्य में प्रकृति के प्रतीकात्मक एवं बिम्बात्मक प्रयोग से देश-प्रेम, व्यक्ति निष्ठ-प्रेम, आध्यात्मिकता, नारी के प्रति विविध दृष्टिकोण, आशा-निराशा आदि भावनाओं को अभिव्यक्ति दी है। पर्यावरण-प्रदूषण के कारण हो रहे विनाश के प्रति भी आधुनिक कवि चिंतित हैं।

आधुनिक हिन्दी-काव्य में व्यंग्यात्मकता का स्वर प्रमुखता से उभरा है। जीवन के विविध क्षेत्रों की असमानताएँ, विषमताएँ, विसंगतियाँ, कुरीतियाँ, विद्रूपताएँ, भ्रष्टाचार, पश्चिमी सभ्यता का अंधानुकरण आदि अनेक समस्याओं को व्यंग्य के माध्यम से उकेरा गया है और उन पर हथौड़े जैसा प्रहार भी किया है।

आधुनिक काव्य में अनावस्था, निराशा, नास्तिकता के साथ आत्मविश्वास, आशा, आस्था, विश्वास के स्वर भी हैं।

सामाजिक अवधारणा

समाज का सजग नेत्रों से निरीक्षण करने वाला कुशल चितेरा कवि सामाजिक प्राणी होने के नाते एक ओर समाज के विभिन्न रूपों से प्रभावित होता है तो दूसरी ओर युग-दृष्टा और युग-निर्माता बन समाज को प्रभावित कर नया रूप भी देता है। आधुनिक काल की रचनाओं में जीवन और जगत का यथार्थ चित्रण, समसामयिक समाज से सम्पृक्त होने का भाव, बाह्याडम्बरों का विरोध, देश की समस्याओं के प्रति सजग दृष्टि, जन कल्याण की उत्कट

भावना, नागरिकों को उनके दायित्वों के प्रति सजग रहने का आह्वान, साम्प्रदायिकता की भावनाओं का विरोध, शोषण का विरोध तथा नव-निर्माण की चुनौतियों को स्वीकार करना आदि भावनाओं का नवोन्मीलन है।

आम आदमी की दयनीय स्थिति

शहरीकरण के कारण आम आदमी अकेला और अजनबी हो गया है। महँगाई, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी जैसी समस्याओं के कारण आम आदमी तनावग्रस्त, कुंठित और अन्दर तक टूट गया है। संसार रूपी मरुस्थल को देख कर मनुष्य के स्वप्न खोते जा रहे हैं-

''कौड़ियों के मोल मोती बिक रहे हैं इस नगर में,
अब न कोई-साथ मेरे इस नगर में
स्वप्न मेरा खो गया है इस नगर में।।''(109)

-डॉ0 रमाकान्त शर्मा

सामाजिक विसंगतियों का चित्रण

वर्तमान भारतीय समाज विसंगतियों से भरा हुआ है। वर्तमान पूँजीवादी व्यवस्था के कारण अमीर-गरीब के बीच खाई बढ़ती जा रही है। गरीब, पिछड़े और कमजोर लोगों की स्थिति और दयनीय हो रही है।

डॉ0 दयाचन्द जैन ने सामाजिक विसंगतियों का चित्रण अपनी कविता में कुछ इस प्रकार किया है-

''इक तरफ़ ये झुग्गियाँ हैं, इक तरफ़ ऊँची इमारत।
इक तरफ फ़ाक़ाकशी है, इक तरफ़ कातिल तिजारत।''(110)

क्षणबोध

आधुनिक कविता का एक प्रमुख स्वर क्षणबोध है। वर्तमान जीवन में एक क्षण भी महत्वपूर्ण है। आधुनिक कविता में जीवन के विभिन्न क्षणों, प्रसंगों और दृश्यों का चित्रण हुआ है। व्यक्ति जीवन का हर क्षण जीना चाहता है। जीवन क्षणिक है। भौतिक सुख सुविधा -ओं से घिरे व्यक्ति को क्षणिक दुखमय संसार भी चिरस्थायी और सुखमय प्रतीत होता है। डॉ0 रमाकान्त शर्मा के अनुसार जीवन का उन्माद, दुख, आँसू सब क्षणिक हैं-

''क्षणिक है जीवन का उन्माद,
क्षणिक है दुख का निर्मम आघात,
क्षणिक है आसूं का आगार...''(111)

महानगरीय संत्रास

शहरी जीवन की चकाचौध से आज मनुष्य-जीवन का मशीनीकरण हो गया है।

मनुष्य की संवेदनशीलता, प्रेम, सौहार्द्र सब खो गए हैं। जीवन में आगे बढ़ने की दौड़ में मनुष्य और उसके मूल्यों, आदर्शों का ह्रास हो रहा है। शहरी जीवन की आपधापी से त्रस्त मनुष्य तनावग्रस्त हो गया है। शहर के इस उबाऊ जीवन में मनुष्य की दिनचर्या यंत्रवत हो गई है-

''जन्म से लेकर मरण तक दौड़ता है आदमी,
दौड़ते-ही-दौड़ते दम तोड़ता है आदमी।''(112)

महानगरीय संत्रास आधुनिक युग की देन है। शहरी जीवन की यांत्रिकता और शुष्कता के कारण उपजे महानगरीय संत्रास का आधुनिक कविता में चित्रण हुआ है। महानगरों में मिलें, कल-कारखाने, बसें, भौतिक सुविधाएँ सब कुछ हैं परन्तु जीवन-मूल्य नहीं हैं। डॉ0 राम कुमार गुप्त जी ने घर से मिल के बीच मशीन का बेजान पुर्जा बन दौड़ते मजदूर का सटीक शब्द-चित्र खींचा है-

''सड़कों पर गहराती भीड़/हर रोज इसी तरह दौड़ती है।
हाथों में खाली टिफिन/मुँह में आधी बीड़ियाँ दबाये,
रूई के फुनगों से लिपटे चेहरे लिये,
हर रोज इसी तरह दौड़ती है।''(113)

शहरीकरण और यांत्रिकीकरण रोजगार भी उपलब्ध कराता है। किशोर काबरा जी ने भी शहरों के बढ़ते इसी विस्तार का वर्णन किया है-

''देखो तो शहरों को
धुआँ कारखानों से बल खाता निकल रहा,
वैभव को भ्राता-सा बाहों में
बेकारी कुचल रहा पाँवों में।''(114)

शहरी संस्कृति में स्वार्थ-प्रियता है। हर कोई अपना उल्लू सीधा करना चाहता है। नलिनी जी ने मानव की स्वार्थी मानसिकता को कुछ इस प्रकार व्यक्त किया है-

''कितने महान हैं/ये कैक्टस-/अपने काँटे
दूर से दिखा/आगाह कर देते हैं/और-इंसान
गले लगा/प्यार जता/छिपे कांटो से
लहु लुहान कर देते हैं।''(115)

आधुनिक कवियों ने देश और विश्व की वर्तमान ज्वलंत समस्याओं के प्रति अपनी जागरूकता का परिचय अपनी कविताओं में दिया है।

भुज(गुजरात) में आए भूकम्प से भी आधुनिक कवि अछूता नहीं रहा है-

''काँपते जन
पीपल के पत्ते से
भूकम्प त्रस्त।''(116)

डॉ0 रमाकान्त शर्मा ने हिन्दुस्तान-पाकिस्तान की समस्या पर सहानुभूति पूर्वक विचार व्यक्त किया है-

''पाकिस्तान-हमारी घृणा का पठार/वह
भाई है-/जिसे हम प्यार/नहीं दे पाये।''(117)

ओसामा बिन लादेन के फैलाए आंतकवाद और कारगिल-युद्ध पर भी कवियों ने अपने विचार व्यक्त कर विश्व में फैले आंतकवाद और कौमी दंगों की विभीषिका का चित्रण किया है-

''ओसामा बिन लादेन/काश, तुम मेरे देश में जन्में होते
तो तुम जानते कि-सत्य और न्याय जहाँ है,
विजय भी वहाँ है...कारगिल के युद्ध में/गीता
फिर से रची गयी!''(118)

हास्य और व्यंग्य

हास्य और व्यंग्य के बिना जीवन अधूरा है। गुजरात का कवि भी इससे बच नहीं पाये हैं। गुजरात के लगभग हर कवि ने हास्य-व्यंग्य से भरी कविताएँ की हैं।

अम्बाशंकर नागर जी ने राष्ट्र के कर्ण धारों के रूप में वर्तमान युवा पीढ़ी की जर्जरता और निष्क्रियता पर व्यंग्य किया है-

''तन से जर्जर, मन से शंकित
कैसे दुर्बल! अति आतंकित!
सोते हैं ये चिर निद्रा में
ताने तम का भीषण वितान।''(119)

डॉ0 भगवतशरण अग्रवाल ने भी आधुनिक युग में मशीनों पर मनुष्य की बढ़ती निर्भरता पर कटाक्ष किया है-

''करूँ? न करूँ?
प्रेम;रूको पूछ लूँ
कम्प्यूटर से।''(120)

डॉ0 विष्णु विराट जी ने भी आक्रोश युक्त स्वर में सामाजिक एवं राजनीतिक विसंगतियों पर तीक्ष्ण व्यंग्य किए है-

''गूँगे हैं लोग
घर घर में रोग
कैसे आयोग?''(121)

प्रकृति

गुजरात के आधुनिक कवियों की प्रकृति-निरीक्षण क्षमता अत्यन्त सूक्ष्म, विस्तृत तथा गहरी है। जंगल, पर्वत, नदी-घाटियाँ, गगन, हरे-भरे खेत-खलिहान, पक्षियों का कलरव, पर्वत-चोटियाँ तथा ऊँचाई से गिरते प्रपात-प्रकृति के इन सुन्दर मनोहरी दृश्यों को देखकर कवि का भावुक हृदय कल्पनाओं के कैनवास पर रचनाएँ उकेरता जाता है। मधुमालती चौकसी को बहती जलधारा मुग्ध और आनन्दित करती है-

''पायल खनकी जलधारा की
कोमल, गतिमय निज चरणों को
प्रस्तर की छाती पर धरकर
रसकण बिखराती चली धार
स्पंदित अपनी में नवल प्यार।''(122)

इन कवियों ने प्रकृति के सौम्य ओर रौद्र दोनों रूपों का प्रतीकात्मक चित्रण किया है। शहरी जीवन की यांत्रिकता और प्रकृति के प्रति उदासीनता और संवेदनहीनता को डॉ0 दयाचन्द जैन ने अत्यन्त प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है-

''जंगलों को काटकर/जब से शहरीकरण हुआ है
आदमी ने जंगल/अपने में रोप लिया है।
अब वे नृंशस कँटीले नरभक्षी वृक्ष
किसी जंगल में नहीं मिलते हैं
नर के अन्दर ही उगा करते हैं।''(123)

डॉ0 विष्णु 'विराट' ने भारतीय अस्मिता की छिपी शक्ति को प्रकृति के माध्यम से उकेरा है-

''हम हिमालय के धवल पंखी
शीत लहरों में विचरते हैं
आँधियों की बाँह थामे हम
बिजलियों से बात करते हैं''(124)

नारी के विविध रूपों का चित्रण

आधुनिक काव्य में नारी का पत्नी, बेटी, ममतामयी माँ, प्रेमिका सभी रूपों में चित्रण हुआ है। उसके मन की थाह लगा पाना किसी भी पुरुष के लिए संभव नही है-

''रमणी मन
ब्रह्म अपरिमेय
बोल अबोल।''(125)

-आ0 रघुनाथ भट्ट

नारी-जीवन के अनेक दर्दनाक पहलुओं का चित्रण आधुनिक कवियों ने किया है-

''औरत पहले तुलसी के पत्तों सी .
श्रद्धा से संजोई गई, पूजी गई,
बाद में-
गुलाब सी महकी, महफिलों में
संवारी गई, सहलाई गई
और-/आज/
'मनीप्लांट' बन गई है।''(126)

वर्तमान समाज में एक ओर नारी की दुर्दशा हो रही है तो दूसरी ओर वह आधु-निकता के रंग में रंग कर नैतिक और सांस्कृतिक पतन की ओर अग्रसर हो रही है-

''चीर हरण
थी कृष्णलीला तब
ब्यूटी है आज।''(127)

आधुनिक कवियों ने नारी को भोग्या न समझ का शक्ति का प्रतीक मानते हुए नारी जागरण के महत्त्व पर बल दिया है। आज नारी को शिक्षित हो अपने प्रति हो रहे अन्याय का विरोध कर अपनी अलग पहचान बनानी होगी। युगों से पद-दलित नारियों को जगाने का, शिक्षित करने का, आगे बढ़ने और भविष्य को सँवारने का आह्वान भी आधुनिक कवियों ने किया है-

''बढ़ चलो वीरांगनाओं,
पंख पैरों में लगा लो।
हाथ में भर लो हवाएँ,

सूर्य को आँखों में भरकर
दूर, केवल दूर देखो।''(128)

राजनीतिक अध:पतन के प्रति आक्रोश

आज की कविता में राजनीति और प्रशासन के नाम पर देश में फैली अराजकता को दूर करने की तत्परता दिखाई देती है। सत्तालोलुपता, खोखली आदर्शवादिता और राजनीतिक विसंगति को डॉ0 रामअवधेश त्रिपाठी ने अपने शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया है-

''पी राजनीति का विष-प्याला, बनता सफेद भी है काला,
रोती कश्मीरी गिरिमाला, लगता हड़तालों का ताला
भारत की विस्फोटक सीमा, है बनी कालिका सी भीमा।।''(129)

आज के नेता देश की भोली-भाली जनता को उल्लू बना कर अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। चुनाव से पहले जनता को मूलभूत सुख-सुविधाओं का वादा देकर चुनाव जीत जाते है और बाद में अपने वादों से मुकर जाते हैं। सियासत के दूषित चेहरे को बेनकाब करते हुए भगवानदास जैन जी कहते है-

''बैठकर संसद में वे अब सोचते हैं यूँ,
यह हमारी है हमारे बाप की दुनिया''(130)

डॉ0 विष्णु 'विराट' ने अपने हाइकु में भी राजनीतिज्ञों का पर्दाफाश किया है-

''कुछ साँप थे/राजनीति में आये/शुद्ध हो गये।''(131)

साम्प्रदायिकता का विरोध

वातावरण में साम्प्रदायिकता का विष घोलकर आम जनता को भड़काकर स्वार्थी पूंजीपति और सत्ता लोलुप नेता अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए धर्म के नाम पर मासूम जनता को गुमराह करते है। इस कारण आए दिन साम्प्रदायिक आग भड़कती रहती है और झगड़े होते हैं। इसी आग में मक्कार और स्वार्थान्ध धन्ना सेठ अपनी स्वार्थ की रोटी सेंकते हैं। आधुनिक काल की कविताओं में इन्हीं साम्प्रदायिक भावनाओं का विरोध प्रकट हुआ है। मानवीय मूल्यों के लिए चिन्तित कवि सुलतान अहमद ने साम्प्रदायिक वातावरण, भारतीय राजनीति, आम आदमी की मासूमियत तथा दयनीय स्थिति, राजनीतिक शिंकजों आदि को सादे और सरल शब्दों में प्रस्तुत किया है-

''चन्दू और सुलेमान/हमें नहीं पहचानते/ जैसा हम कहते हैं/ वे मानते हैं/हम चन्दू को/सुलेमान से लड़ाते हैं/... जैसी हमें जरूरत होती है/ हम चन्दू

को/कभी हिन्दू/कभी ब्राह्मण.../सुलेमान को/कभी मुसलमान/कभी वहाबी बताते हैं/बाड़ों के भीतर/हम बाड़े बनाते हैं/और किसी बाड़े में/रोशनी नहीं जाने देते/यह अंधेर नगरी है।''(132)

राष्ट्रीय प्रेम एवं सांस्कृतिक एकता

आधुनिक काल की कविताएँ राष्ट्रीय भावनाओं के स्पन्दन से ओतप्रोत हैं जिसमें देश की संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान के सांस्कृतिक विकास में भारत के योगदान को रेखांकित किया है। आधुनिक काल के कवियों ने अपनी कविताओं में राष्ट्र-प्रेम, राष्ट्र-भक्ति, राष्ट्रीय चरित्र आदि राष्ट्र के विविध चिन्तनात्मक पहलुओं को सटीक ढंग से प्रस्तुत कर अपने दायित्व का निर्वाह किया है। आधुनिक कवियों ने भारत के गौरवशाली इतिहास की दिव्य झांकी का अंकन करते हुए अपनी कविताओं में देश के नागरिकों से इसकी रक्षा करने का आह्वान किया है। डॉ0 विष्णु 'विराट' को देश पर जान न्योछावर करने वाले सैनिकों पर नाज है-

''वक्ष पर तूफान के शत-शत बवंडर झेलते हैं,
हम विकल, उत्ताल लहरों में विहंस कर खेलते हैं।''(133)

डॉ0 घनश्याम अग्रवाल जी अपनी कविता में राष्ट्र की रक्षा में समर्पित होने का आह्वान करते हैं-

''आजादी नहीं मिलती बिना सरफरोशी के,
आजाद भारत के लिए अब लोहू चुकाना है।''(134)

आध्यात्मिक व ईश्वरीय प्रेम

ईश्वर सर्वव्यापक है। भारत आध्यात्म-प्रधान देश होने के कारण यहाँ के कवियों ने आत्मा और परमात्मा के सम्बन्धों को व्याख्यायित किया है। कवियों ने अपने-अपने आराध्य इष्टदेव-राम, कृष्ण आदि की वन्दना करते हुए उसकी व्यापकता को अनुभव किया है-

''तू ही सुबह/और तू ही है शाम/हे मेरे राम''।
और निर्मल मन/ह्रा सरोवर है/आत्मा निवास।''(135)

-आ0 रघुनाथ भट्ट

निर्मला आसनानी जी ने आत्मा और परमात्मा के अभिन्न सम्बन्धों की अभिव्यक्ति 'खेल' शीर्षक कविता में एक रूपक के माध्यम से की है-

''मैं स्वप्न, तू आँख है/मैं उड़ान, तू पाँख है,
मैं नींव, तू निर्माण है, मैं जीवन, तू प्राण है।''(136)

विज्ञान के प्रति दृष्टिकोण

आधुनिक युग में विज्ञान के अविष्कार वरदान के साथ अभिशाप भी सिद्ध हो रहे है। युग-संत्रास का एक मुख्य कारण वैज्ञानिक अविष्कारों का अंधाधुंध प्रसार होना है। विज्ञान की उपासना से मनुष्य मशीनों का गुलाम हो गया है।

वैज्ञानिक उपलब्धियों के कारण महानगरों में हर जगह समस्याएँ बढ़ रही हैं। यातायात के साधनों के विकास तथा कल-कारखानों के कारण वातावरण में प्रदूषण का धुँआ भर रहा है। भगवान दास जैन जी ने विज्ञान के दुष्प्रभावों का वर्णन कुछ इस प्रकार किया है-

''हम नज़ारे में धुँवा है, हर नज़र में है जहर,
आ गया किस मोड़ पर, अफसोस यह विज्ञान है।''(137)

विज्ञान की खतरनाक देन परमाणु बम के आविष्कार से हिरोशिमा और नागासाकी की बर्बर अमानवीय विनाश-लीला से डॉ0 रमाकान्त शर्मा का कवि-मन उद्वेलित हो रहा है-

''हिरोशिमा-नागासाकी-वियतनाम/यूरोप-एशिया धू-धू जल रहे
असंख्य कोमल शिशु!''(138)

वैज्ञानिक सभ्यता आज मनुष्य के सिर चढ़ कर बोल रही है। 'न्युक्लीयर-युद्ध' इसी का परिणाम है। डॉ0 भगवत शरण अग्रवाल मानवता को परमाणु-शक्ति के विध्वंसक राक्षस से बचाना चाहते हैं-

''न्युक्लीयर-शक्ति के 'अहम' के राक्षस से-
मानवता को बचाओ!''(139)

कलापक्ष

भाषा अभिव्यक्ति का सशक्त एवं महत्वपूर्ण साधन है। संवेदनशील कवि कविता में भाषा के माध्यम से अपने भावों की अभिव्यक्ति करता है। आधुनिक कवियों ने भावानुरूप, युगानुरूप भाषा-प्रयोग किया है। गुजरात के प्राचीन साहित्यकारों ने ब्रज भाषा को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया था। स्वातंत्र्योत्तर काल में ब्रज भाषा का स्थान धीरे-धीरे खड़ी बोली ने ले लिया और गुजरात के समकालीन कवियों ने खड़ी बोली हिन्दी में सशक्त काव्य-रचना की है। इन कवियों ने एक ओर कोमल कांत पदावली में प्रेम और प्रणय के मधुर भावों की अभिव्यक्ति की है तो दूसरी ओर ओजपूर्ण, सरल, विषयानुकूल तथा विस्फोटक भाषा में राजनीतिक, सामाजिक विसंगतियों, महानगरीय संत्रास, आम आदमी की पीड़ा, कुंठा, शोषण तथा साम्प्रदायिकता का विरोध किया है। गुजरात के आधुनिक काव्य में भाषा के विविध रूपों का प्रयोग हुआ है। कहीं सरलभाषा तो कहीं संस्कृतनिष्ठ भाषा के दर्शन होते हैं;

कहीं विदेशी तो कहीं देशज शब्दों का प्रयोग मिलता है। नए शब्द-चयन से जीवन के यथार्थ का भी सूक्ष्मता से चित्रण हुआ है। डॉ0 विष्णु विराट जी द्वारा प्रयुक्त सरल और सुन्दर खड़ी बोली देखिए-

''जंगल भर आग/भाग बेटा भाग
कहते हैं लोग/हँसते हैं लोग
बुनते हैं जाल/फँसते हैं लोग''(140)

अनेक कवियों की रचनाओं में संस्कृतनिष्ठ भाषा मिलती है। एक उदाहरण देखिए-

''अन्तर्ज्योति जगे प्रभु मन में,
बहुत हो चुका तम में जीते,
दु:ख-पीड़ा के आँसू पीते।''(141)

-डॉ0 कैलाशनाथ तिवारी

कहीं पारम्परिक प्राचीन ब्रज भाषा का प्रयोग मिलता है-

''देखत ही मेंहदी-मेंहदी भई, नैनन नेह रचाय गई कछु।
कानन-लौं अँखियांन की बानगी, मोहन के मन भाय गई कछु।
छ्वैगनी-छोर छली नें छुई कछु, कान की लोर ललाय गई कछु।
लौंटि कैं आई कछू-कछू मायकें, कान्ह के गाम लुटाय गई कछू।।''(142)

अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग भी आधुनिक कविता में हुआ है-

''माना कि शराफ़त की खातिर,
ख़ामोश रहते हैं हम,
पर इसका मतलब ये तो नहीं,
कि कुछ कहने को हमारे पास होना नहीं है।''(143)

-निर्मला आसनानी

इसमें 'शराफ़त', 'खातिर', 'मतलब' अरबी के और 'ख़ामोश' फारसी के शब्द हैं।

भावों के अनुरूप हिन्दी काव्य में अंग्रेजीनिष्ठ भाषा का प्रयोग भी मिलता है-

''पोर्टफोलियो में भविष्य के सपने
ऊँघ रहे हैं
आफिस की आवाजों में
चमकते हैं लिपस्टिक के दाग़''(144)

-डॉ0 कमल पुंणाणी

प्रस्तुत पंक्तियों में 'पोर्टफोलियो', 'आफिस', लिपस्टिक' आदि अंग्रेजी शब्दों के साथ 'दाग़' फारसी शब्द का प्रयोग हुआ है।

कहीं पर कविता में ग्रामीण परिवेश के मध्य विरह-विदग्धा नारी के चित्रण में देशज शब्दों का प्रयोग मिलता है-

''कैसे कजरा लगाऊँ मैं, बिंदिया सजाऊँ
कासे कह लूँ मैं मनवा की बतियाँ''(145) -अविनाश श्रीवास्तव

रस

आधुनिक कविता में विभिन्न रसों का समावेश हुआ है।

शृंगार रस

शृंगार रस की परिकल्पना रसराज के रूप में की गई है। इसके दो भेद हैं-संयोग शृंगार और वियोग शृंगार। डॉ0 नागर ने 'प्रम्लोचा' में प्रम्लोचा और कण्डु ऋषि की संयोगावस्था का शृंगार परक चित्रण किया है-

''आलिंगन दृढ़ हुए/कस गये/वस्त्राभरण/
विदीर्ण हुए/समरांगण/बन गई सेज/
नख-दंत क्षत उत्कीर्ण हुए।।''(146)

हास्य रस

हास्य रस का आधुनिक काव्य में सफल प्रयोग हुआ है। डॉ0 माणिक मृगेश द्वारा रचित हास्य-व्यंग्य का एक उत्कृष्ट उदाहरण देखिए-

''गद्दी वाले ही नहीं;/रद्दी वाले भी/हिन्दी को महत्ता कम देते है/इसलिए/हिन्दी अखबार की रद्दी को/अंग्रेजी अखबार की तुलना में/काफी कम दर पर लेते है।''(147)

करुण रस

डॉ0 विष्णु विराट ने 'निर्वसना' में द्रौपदी की व्यथा का करुण रस से सिक्त चित्रण किया है-

''अहो गिरिधर/जिसे तुम नियति या संयोग कहते हो
सदा वह नारियों का ही बना प्रारब्ध/क्यों करके?
सदा अबला निरीहा नारि की क्यों/भोग्य भर नर की?''(148)

इसके अतिरिक्त रौद्र, वीभत्स, अद्भुत आदि अन्य रसों का भी आधुनिक काल की रचनाओं में समावेश हो गया है।

अलंकार

मध्यकाल में अलंकारों का जितना प्रयोग हुआ उतना आधुनिक काल में नहीं हुआ। आधुनिक काल की कविता ने अनावश्यक अलंकारों का परित्याग कर दिया। फिर भी कहीं-कहीं अलंकारों का प्रयोग दिखाई देता है। आधुनिक काल में गिने-चुने अलंकारों का अधिक प्रयोग हुआ है। डॉ0 नागर ने संयोगावस्था का चित्रण उपमा अलंकार के माध्यम से किया है-

''विगलित होता हिमगिरि
ज्यों रवि-किरणों के/प्रखर ताप से,
पिघल रहा था/तपः पूत मुनिमन
वैसे ही अतनु ताप से।''(149)

शांति सेठ ने भी उपमा अलंकार का सटीक प्रयोग किया है-

''इच्छाओं के घरौंदे,
महत्त्वाकांक्षाओं के महल,
ढह गये जब रेत-से।''(150)

डॉ0 विष्णु विराट ने पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार के अच्छे उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। एक उदाहरण देखिए-

''झुलस गया खेत खेत
फूल फूल पात पात
झुलस गई बाग की कली कली''(151)

डॉ0 रामकुमार गुप्त ने वक्रोक्ति अलंकार का सुन्दर प्रयोग किया है-

''धरती का पुत्र हूँ/नहुंष हूँ पापों का
अहं की कारा में/बन्दी हूँ तृष्णा का।''(152)

किशोर काबरा जी की निम्न पंक्तियों में उपमा और उत्प्रेक्षा अलंकारों का सुन्दर उदाहरण मिलता है-

''सूखे-से ओठों की क्यारी में दौड़ा रही
चुम्बन सी नहरें ये,...
मानो इन खेतों के सीने से
ममता की मारी महतारी जा लिपटी हो।''(153)

आधुनिक काव्य में कम प्रयोग में आने वाले यमक अलंकार का विष्णु विराट

जी ने सफल प्रयोग किया है-

''दीखत नैननि-सी ये कटार, कटार से नैन लहू में भरे से।
बाँकी कमान हैं बौंह मरोनन, बौंह कमान पै बान अरे-से।''(154)

बिम्ब

गुजरात के आधुनिक काव्य में बिम्ब विधान की भंगिमा पूर्ववर्ती सन्दर्भों से पृथक अपेक्षाकृत नई है। आधुनिक मनुष्य के जीवन की जटिलताएँ, संवेदनाएँ, जीवन-मूल्य, आधुनिक भाव-बोध, मूल्य-ह्रास आदि की बिम्बों के माध्यम से सुन्दर अभिव्यक्ति की है। कवियों ने अर्थ के उद्दीपन हेतु और अर्थ-गांभीर्य हेतु बिम्बों का सहज, स्वाभाविक और मनोहर प्रयोग किया है। कवियों की कल्पनाएँ बिम्बों के माध्यम से और अधिक निखरी हैं।

डॉ0 किशोर काबरा ने 'परिताप के पाँच क्षण' में नारी के अनेक बिम्ब देखे हैं जिनमें भोली बालिका, मुग्धा युवती, समर्पित प्रेयसी, विद्रोहिणी और प्रतिशोध लेने वाली नारी के रूप विद्यमान हैं।

डॉ0 अम्बाशंकर नागर ने 'प्रम्लोचा' में दृश्य, श्राव्य, स्वाद्य, स्पार्श्य और घ्राणीय बिम्बों को प्रस्तुत किया है। स्पर्श्य बिम्ब का एक उदाहरण देखिए-

''नव किसलय-सा, प्रिय का पाणिग्रहण कर
प्रहर्षित मुनि/निमिष मात्र में/
सघन कुंज के बीच, उटज में/
सहसा अंतर्लीन हो गये''(155)

प्रतीक

आधुनिक काव्य में पारम्परिक और नवीन दोनों प्रकार के प्रतीक मिलते हैं। आधुनिक कवियों ने संवेदनाओं की अभिव्यक्ति के लिए मूर्त-अमूर्त दोनों प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग किया है। इन्होंने पुराण, इतिहास, साहित्य, रामायण आदि धार्मिक एवं पारम्परिक प्रतीकों को समाज में पनपने वाले अन्याय, पाखंड, भ्रष्टाचार, शोषण, द्वेष, क्रूरता आदि जीवन-सन्दर्भों से जोड़ा है। एक उदाहरण देखिए-

''चक्रव्यूह के कायर वीर
कभी इस पक्ष में
तो कभी उस पक्ष में
इतिहास के पृष्ठों को काला करते
अपनी अपनी जगह खड़े

अपने अपने युग के अभिमन्युओं को मारकर
अपनी अपनी नपुंसक विजय पर
हर्षोल्लास मनाते रहे हैं।'[156]

–डॉ0 भगवतशरण अग्रवाल

काव्यरूप

आधुनिक कविता का माध्यम ब्रजभाषा से खड़ी बोली होने पर वह वर्णवृत्तों को छोड़ मात्रावृत्तों का अनुसरण करने लगी। परन्तु युगीन भावों की अभिव्यक्ति में बाधक प्रतीत होने पर हिन्दी कविता का रूप अछांदस हो गया। अब पुनः छांदस कविता में नवगीत, दोहे, ग़ज़ल, हाइकु, क्षणिका आदि का प्रयोग हो रहा है। कुछ कवियों ने लम्बी कविता, खण्डकाव्य और महाकाव्य भी लिखे हैं।

प्रबन्ध काव्य

आधुनिक काल में प्रबन्ध और मुक्तक दोनों प्रकार के काव्य लिखे गए। प्रबन्ध काव्य के अन्तर्गत गुजरात के आधुनिक हिन्दी काव्य में प्रथम आधुनिक हिन्दी कवि के रूप में प्रसिद्ध दलपतराम कृत 'श्रवणाख्यान' नामक एक आख्यान काव्य तथा राजकवि फूलदास मोनदास मोनावत कृत 'श्री वीरायण' नामक महाकाव्य मिलता है।

अंबा शंकर नागर, किशोर काबरा, जयसिंह 'व्यथित', विष्णु विराट जी ने पौराणिक कथाओं एवं उसके चरित्रों को लेकर प्रबन्ध काव्य लिखे हैं परन्तु वे प्राचीन पारम्परिक पुराण काव्य और चरित काव्य की श्रेणी में नहीं रखे जा सकते। गुजरात के हिन्दी कवियों ने अनेक मिथकीय प्रबन्धकाव्य लिखे हैं। इन कवियों ने राम, कृष्ण तथा महाभारत के पात्रों को अपना उपजीव्य बनाया है तथा पौराणिक घटनाचक्रों को नूतन ढंग से प्रस्तुत किया है।

डॉ0 अम्बा शंकर नागर कृत 'प्रम्लोचा'; डॉ0 किशोर काबरा कृत 'उत्तर रामायण', 'उत्तर महाभारत', 'परिताप के पाँच क्षण', 'नरो वा कुंजरो वा', 'धनुष भंग'; जयसिंह 'व्यथित' कृत 'आर्तनाद', 'राघवेन्द्र', 'बाल कृष्ण', 'कैकयी के राम', 'दलितों का मसीहा', 'हनुमान तीसिका' राजेन्द्र काजल रचित 'चौला देवी'; विष्णु विराट कृत 'कर्ण', निर्वसना', 'तमसा के तट' तथा 'पितृ ऋण'; भागवत प्रसाद नियाज कृत 'कारा', 'कस्मै देवाय' आदि प्रबन्ध काव्य हैं।

गुजरात में अन्य काव्यरूपों के साथ लम्बी कविताएँ भी लिखी गई हैं। हांलाकि 'लम्बी कविता' लिखने वाले कवि गुजरात में कम ही हैं। बसन्त कुमार परिहार की 'गुमशुदा

चेहरे की तलाश', 'उन्नीसवाँ अध्याय', चिन्दी-चिन्दी अस्तित्त्व', 'आरम्भ होती है कविता', 'भ्रमों का जंगल', 'टुंडे आदमी का बयान', 'प्रेमी परसाराम', सुल्तान अहमद की 'दीवार के इधर-उधर', 'द्वारका प्रसाद साँचीहर की 'अलविदा', विष्णु विराट जी की 'एक रण वैचारिकी है शेष', चीनू मोदी की 'खामोश अदालत जारी है', राघव पाण्डेय की 'लाश' तथा फूलचन्द गुप्ता की 'दीनू और कव्वे' उल्लेखनीय लम्बी कविताएँ हैं।

मुक्तक

मुक्तक एक पद या छंद से परिपूर्ण, आकार में लघु स्वतः पूर्ण, चमत्कार युक्त तथा कथात्मकता के अभाव की रचना है। आधुनिक काल में हाइकु, गीत, ग़ज़ल, दोहे आदि मुक्तक काव्य-रूप मिलते हैं।

हाइकु

हाइकु मूलतः जापानी मुक्तक काव्य-विधा है। शास्त्रीय रूप में हाइकु में 5-7-5 के क्रम में तीन पंक्तियों में 17 अक्षर होते है। मात्राएँ तथा अर्धाक्षर नहीं गिने जाते। हाइकु, अनुभूति की चरम सीमा के क्षण में लिखा गया मुक्तक है। डॉ0 भगवतशरण अग्रवाल गुजरात के प्रथम हाइकुकार के रूप में प्रख्यात हैं।

डॉ0 भगवत शरण अग्रवाल कृत 'शाश्वत क्षितिज', 'टुकड़े टुकड़े आकाश', 'अकह', 'सबरस', 'इन्द्रधनुष', 'अस्ति नास्ति', रमेश चन्द्र शर्मा 'चन्द्र' कृत 'क्षण के कण', 'कौंध', 'क्षणांश', आचार्य रघुनाथ भट्ट कृत 'हाइकु त्रिशती' उल्लेखनीय हाइकु-काव्यसंग्रह हैं।

इनके अतिरिक्त मुकेश रावल जी के 1600 हाइकु प्रकाशित हुए हैं। गिरधारी लाल सराफ, डॉ0 भागवतप्रसाद मिश्र 'नियाज', डॉ0 विष्णु विराट, डॉ0 चन्द्रकान्त मेहता, श्रीमती मधु प्रसाद, डॉ0 रजनीकांत जोशी, डॉ0 किशोर काबरा जी आदि ने हाइकु-लेखन में अपनी लेखनी चलाई है।

गीत और नवगीत

आधुनिक काल में मुक्तक काव्यरूप में गीत और प्रगीत या गीति काव्य प्रमुख हैं। एक ओर गीत में संवेदना वस्तु परक होती है वहीं प्रगीत में संवेदना व्यक्तिपरक होती है। गुजरात के प्राचीन कवियों नरसिंह महेता, मीराँबाई आदि के भक्ति गीत प्रसिद्ध रहे हैं। मध्यकाल के भक्ति गीतों के स्थान पर आज के गीतों में राजनीतिक, सामाजिक विसंगतियाँ, ईश्वरीय प्रेम, आक्रोश, तनाव, कुंठा, वर्तमान युग की समस्याएँ आदि प्रतिपाद्य विषय हैं।

डॉ0 अम्बाशंकर नागर, डॉ0 किशोर काबरा, ओंकार अग्निहोत्री, प्रणव भारती, सुरेश शर्मा 'कांत', श्री रामचेत वर्मा, कैलाशनाथ तिवारी, डॉ0 रामकुमार गुप्त, डॉ0 अरविंद

जोशी, दयानन्द जैन, भगवान दास जैन आदि सशक्त एवं उल्लेखनीय गीतकार हैं। इनके अतिरिक्त डॉ0 रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 'तरुण', डॉ0 विष्णु विराट, अविनाश श्रीवास्तव, सुधा श्रीवास्तव, सुलभ धंधुकिया आदि अनेक उल्लेखनीय गीतकार हुए हैं।

गीतों के साथ-साथ नवगीत भी लिखे जा रहे हैं। नवगीत गीतों के विकास का अगला सोपान है। डॉ0 अम्बाशंकर नागर जी का नवगीत देखिए-

''जो लिखो अच्छा लिखो,
अनुभूति से सच्चा लिखो।
काव्य लिखना हो तो बिम्बों में लिखो,
बिम्ब भी ऐसे कि जिनमें तुम दिखो।''(157)

नवगीत के प्रख्यात हस्ताक्षर विष्णु विराट के दो नवगीत संग्रह आ चुके हैं- 'धूम्रवन से लौट आई लाल परियाँ' तथा 'हाथ से छूटे कबूतर'।

ग़ज़ल

भारत में हिन्दी ग़ज़ल की प्राचीन परम्परा रही है। युग प्रवर्तक हिन्दी ग़ज़लकार दुष्यंत कुमार त्यागी ने तीखी सचोट ग़ज़लों के माध्यम से शोषण, आम आदमी की समस्याओं, राजनीतिक विसंगतियों को प्रभावी रूप से व्यक्त कर लोगों का ध्यान ग़ज़लों की ओर आकृष्ट किया। गुजरात में उर्दू और गुजराती ग़ज़ल-साहित्य पर्याप्त प्राचीन एवं समृद्ध है। ग़ज़ल एक ऐसी काव्य-विधा है जिसमें 'रदीफ-काफ़िया', 'मत्ला-मक्ता' आदि का सुनिश्चित छन्दशास्त्र होता है। 'मक्ता' अर्थात अन्तिम शेर में शायर का तखल्लुस आता है। ग़ज़ल लेखन के लिए कुछ मख़्सूस बहरें (छन्द), अरकान (मात्राएँ) और उनकी गणना के नियम होते हैं। गुजरात के आधुनिक कवियों में शेख आदम आबुवाला, रहमत अमरोहवी, खलिश बड़ौदवी, जोजफ अनवर, सुल्तान अहमद, डॉ0 दयाचन्द जैन, वसीम मलिक, भगवान दास जैन, सुरेश शर्मा कांत, किशोर काबरा, अंजना संधीर, रशीद मीर आदि उल्लेखनीय ग़ज़लकार हुए है।

दोहा

आजकल प्राचीन काव्य-रूप दोहे भी प्रचलन में आ गए हैं। आजकल ग़ज़लें भी दोहों पर आधारित लिखी जा रही हैं। 'रैन बसेरा', 'भाषा सेतु', 'साहित्य-संहिता' आदि अनेक पत्र-पत्रिकाओं, कवि-सम्मेलनों, कवि-गोष्ठियों के माध्यम से विकसित हो रहा है। भागवत प्रसाद मिश्र 'नियाज', भगवानदास जैन, सरशार बुलंद शहरी, दिनेश शुक्ल, कुँवर बेचैन, कैलाश गुप्त आदि के दोहे उल्लेखनीय हैं।

सन्दर्भ-ग्रंथ-सूची

1. 'मीराँबाई की पदावली' - परशुराम चतुर्वेदी, सं0 2011, पद 165 ।
2. 'राजस्थान एवं गुजरात के संत एवं भक्त कवि', पृ0 266 ।
3. 'नरसिंह महेता कृत काव्य संग्रह', पृ0 253 ।
4. 'प्रीतमवाणी', पृ0 91 ।
5. 'प्रबोध बत्रीसी', षटपदी 627 ।
6. 'छोटमनी वाणी', पृ0 255 ।
7. 'अनवर काव्य' - संपा0 महासुखभाई चूनीलाल, तृतीय आवृति, सन 1912 ।
8. 'छोटमनी वाणी'
9. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 9 ।
10. 'प्रीतम वाणी' - माया अंग, पृ0 128 ।
11. 'संक्षिप्त संत सुधा', पृ0 287 ।
12. देखिए- 'संतराम पद संग्रह'
13. 'रविभाण अने मोरारनी वाणी', पृ0 31 ।
14. 'स्थूलिभद्रफाग - मालदेव', 'प्राचीन फाग संग्रह', पृ0 31 ।
15. 'भरतबाहुबलिछन्द, कुमुदचन्द्र, पद्य 1, प्रशस्ति संग्रह', जयपुर, पृ0 243 ।
16. 'समयसुन्दर कृत कुसुमांजलि' नमिजिन स्तवन, पृ0 12-13 ।
17. 'ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह', पृ0 116-117 ।
18. 'भजनसंग्रह - धर्मामृत', पृ0 12 ।
19. 'जैन गूर्जर कवियों की हिन्दी कविता', पृ0 242 ।
20. 'जिनराजसूरि कृत कुसुमांजलि', पृ0 112 ।
21. 'अंजनासुन्दरीरास' ।
22. देखिए - 'गुजरात में उर्दू शायरी की इब्तेदा और पहला शायर' - डॉ0 ग्यानचन्द जैन (साबरनामा 1988)।
23. 'दक्खिनी हिन्दी काव्यधारा', पृ0 13 ।
24. 'मध्यकालीन हिन्दी साहित्य : अध्ययन एवं अन्वेषण', पृ0 101 ।
25. 'मध्यकालीन हिन्दी साहित्य : पुनरीक्षण', पृ0 94 ।
26. वही, पृ0 94 ।
27. 'गुजरात का मध्यकालीन हिन्दी साहित्य' में डॉ0 नन्द हिंगोराजी द्वारा लिखित 'कच्छ

का मध्यकालीन हिन्दी साहित्य' लेख से उद्धृत, पृ0 172 ।

28. 'मध्यकालीन हिन्दी साहित्य : अध्ययन एवं अन्वेषण', पृ0 160 ।
29. 'प्रवीण सागर', लहर 39, छंद 7 ।
30. 'गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृ0 133 ।
31. 'प्राचीन फाग संग्रह', पृ0 31 ।
32. 'दयाराम रसथाळ', पद-संख्या 23, पृ0 71, संवत् 2001 संस्करण
33. 'वस्ता नी साखीओ' (विरह को अंग), ह0प्र0सं0 17, डॉ0 योगीन्द्र त्रिपाठी ।
34. 'दयाराम काव्य-संग्रह', पृ0 374 ।
35. 'ब्रह्मानन्द काव्य' - मोतीलाल त्रिभोवनदास फौजदार, सं0 1966 ।
36. 'रविभाण अने मोरारनी वाणी', पृ0 15-16 ।
37. 'गूर्जर जैन कवियों की हिन्दी साहित्य को देन', पृ0 85 ।
38. 'राजस्थान एवं गुजरात के संत एवं भक्त कवि', पृ0 268-269 ।
39. वही, पृ0 269-270 ।
40. 'संतप्रिया' -26 ।
41. 'भजनसंग्रह - धर्मामृत', पृ0 8 ।
42. 'मुकुन्द-कृत कविता, प्राचीन काव्यमाला भा0 11', सं0 1945-46 ।
43. 'मूलदासजीनी काव्यवाणी' - संपा0 महंत औधवदास महाराज 'बिन्दु' ।
44. रविसाहब कृत 'गुरुमहात्म्य' ।
45. 'संतकाव्य', पृ0 437 ।
46. 'गूर्जर साहित्य संग्रह', प्रथम भाग, पृ0 576 ।
47. 'दयाराम सतसई' - संपा0 डॉ0 अम्बाशंकर नागर ।
48. 'गुजरात के हिन्दी गौरव ग्रंथ', पृ0 169 ।
49. 'हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन', पृ0 301 ।
50. 'मध्यकालीन गुजरात का हिन्दी-काव्य', पृ0 94 ।
51. 'अक्षयरस', पृ0 98, पद 11 ।
52. 'उदाधर्म पंचरत्नमाला', पृ0 428 ।
53. 'मध्यकालीन गुजरात का हिन्दी-काव्य', पृ0 95 ।
54. 'समयसुन्दर कृत कुसुमांजलि', पृ0 26 ।
55. 'छोटमनी वाणी', पृ0 255 ।

56. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 128 ।
57. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 52 ।
58. 'अक्षयरस', पृ0 98, पद 11 ।
59. 'डॉ0 अम्बाशंकर नागर अभिनन्दन ग्रंथ', पृ0 208 ।
60. 'दयाराम सतसई', पद 131 ।
61. 'प्रीतमदासनी वाणी', पृ0 111-112 ।
62. 'हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन', पृ0 301 ।
63. 'दयाराम काव्य-संग्रह', पृ0 351 ।
64. 'परिचित पद संग्रह', पद 2, पृ0 260 ।
65. 'गुजरात के हिन्दी गौरव ग्रंथ', पृ0 162 ।
66. 'हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन', पृ0 295 ।
67. 'अखा कृत जकड़ी' - 14 ।
68. 'आनन्दघन पदसंग्रह' ।
69. 'दयाराम सतसई' ।
70. 'गूर्जर जैन कवियों की हिन्दी साहित्य को देन', पृ0 278 ।
71. ''वेद बड़े गिरबान तें, नारायन की बांनि ।
    ब्रजभाषा भल ताहितें, ब्रजपति भखि मुख जानि ॥''
    -'दयाराम सतसई', दोहा 708 ।
72. 'दयाराम सतसई' दोहा सं0 451 ।
73. 'गुजरात के हिन्दी गौरव ग्रंथ' - 'उपदेश बावनी', पृ0 165 ।
74. 'राजस्थान एवं गुजरात के संत एवं भक्त कवि', पृ0 266 ।
75. प्राणनाथ कृत 'कलस' (हिन्दी), प्र0 16, चौ0 1 ।
76. 'भजनसागर', पृ0 618 ।
77. 'मध्यकालीन हिन्दी साहित्य : अध्ययन एवं अन्वेषण', पृ0 100 ।
78. 'अखानी वाणी अने मनहर पद', पृ0 413 ।
79. प्राणनाथ कृत 'कुलजम शरीफ (सनंध)', प्र0 2, चौपाई 2 ।
80. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 241 ।
81. 'आनन्दघन पदसंग्रह', पद 16, पृ0 37 ।
82. 'राजस्थान एवं गुजरात के मध्यकालीन संत एवं भक्त कवि', पृ0 261 ।

83. 'मीराँबाई की पदावली', पृ0 149 ।
84. 'रविसाहबनी साखिओ', पृ0 237 ।
85. 'संत सुधासार', पृ0 281 ।
86. 'कुलजम शरीफ' (सिन्धी) - प्राणनाथ, प्र0 4, चौ0 1 ।
87. 'हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन', पृ0 280 ।
88. 'डॉ0 नागर अभिनन्दन ग्रंथ' ।
89. 'संतसुधासार', पृ0 283 ।
90. 'कुलजम शरीफ', 'प्रकाश' (हिन्दी) - प्राणनाथ, पृ0 7, चौ 10 ।
91. वही, 'सनंध' - प्राणनाथ, पृ0 2, चौ0 2 ।
92. 'राजेकृत काव्यसंग्रह', पृ0 114 ।
93. 'भजनसंग्रह-धर्मामृत', पृ0 73 ।
94. 'हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन', पृ0 281 ।
95. 'रविसाहबनी साखियों', पृ0 281, 306, 236 ।
96. 'हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन', पृ0 139 ।
97. 'दक्खिनी हिन्दी काव्यधारा' - श्री राहुल सांकृत्यायन, पृ0 301 ।
98. 'अप्रसिद्ध अक्षयवाणी', पृ0 201 ।
99. 'भजन संग्रह-धर्मामृत', पृ0 26 ।
100. 'प्रीतम वाणी', पृ0 91 ।
101. 'गवरी कीर्तनमाला', पद 347, पृ0 153 ।
102. 'राजे भगत', पृ0 227 ।
103. 'जैन गूर्जर कवियों की हिन्दी कविता', पृ0 264 ।
104. 'प्रीतमवाणी', पृ0 77 ।
105. हरिसिंह ठाकुर कृत 'ज्ञानकटारी' -18 ।
106. 'दयाराम रसथाळ', पद संख्या 23, पृ0 71, संवत् 2001 संस्करण ।
107. 'गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी', पृ0 38 ।
108. 'गुजरात के हिन्दी गौरव ग्रंथ', पृ0 148 ।
109. 'अशब्द अर्थ', पृ0 12 ।
110. 'दर्द का रिश्ता' - डॉ0 दयाचन्द जैन ।
111. 'उगते शब्द', पृ0 45 ।

112. 'चन्दन हो गया हूँ' - किशोर काबरा, 'आदमी' शीर्षक कविता से ।
113. 'धुएँ का शहर' - डॉ0 रामकुमार गुप्त
114. 'गुजरात के समकालीन हिन्दी कवि', पृ0 61-62 ।
115. 'अनुभूति' - नलिनी पुरोहित ।
116. 'हाइकु-त्रिशती' - आचार्य रघुनाथ भट्ट ।
117. 'एक अर्थ' में 'पठार' शीर्षक कविता से ।
118. 'गुजरात की समकालीन हिन्दी कविता', पृ0 92-93 ।
119. 'चाँद, चाँदनी और कैक्टस', पृ0 66 ।
120. 'टुकड़े-टुकड़े आकाश', पृ0 29 ।
121. 'आचार्य रघुनाथ भट्ट अभिनन्दन ग्रंथ', पृ0 222 ।
122. 'भाव-निर्झर', पृ0 78 ।
123. 'रोशनी की तलाश', पृ0 26 ।
124. 'धूम्रवन से लौट आई लाल परियाँ - डॉ0 विष्णु विराट, पृ0 27 ।
125. 'हाइकु-त्रिशती' - आचार्य रघुनाथ भट्ट ।
126. 'बोनसाई संवेदनाओं के सूरजमुखी', पृ0 18 ।
127. 'हाइकु-त्रिशती' - आचार्य रघुनाथ भट्ट ।
128. 'दंशों के घेरे में' - डॉ0 सुधा श्रीवास्तव ।
129. 'चरैवेति', पृ0 80 ।
130. 'जिन्दा है आईना', पृ0 19 ।
131. 'आचार्य रघुनाथ भट्ट अभिनन्दन ग्रंथ', पृ0 222 ।
132. 'दीवार के इधर-उधर', पृ0 44-45 ।
133. 'पछुवाँ के हस्ताक्षर', पृ0 183 ।
134. 'धरती गाये रे' - डॉ0 घनश्याम अग्रवाल ।
135. 'हाइकु-त्रिशती' ।
136. 'अभीप्सा', पृ0 67 ।
137. 'रोशनी की तलाश', पृ0 48 ।
138. 'हाथ आँखों वाले', पृ0 38 ।
139. 'खामोश हूँ मैं' ।
140. 'धूम्रवन से लौट आई लाल परियाँ', पृ0 43 ।

141. 'डॉ0 रामकुमार गुप्त अभिनन्दन ग्रंथ', पृ0 143 ।
142. 'गुजरात के समकालीन हिन्दी कवि', पृ0 223 ।
143. 'अभीप्सा' - निर्मला आसनानी ।
144. 'प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुष' में 'मजबूरी' शीर्षक से ।
145. 'छूटे तटबन्धों पर पुनः' ।
146. 'प्रम्लोचा', पृ0 63-64 ।
147. 'आचार्य रघुनाथ भट्ट अभिनन्दन ग्रंथ', पृ0 197 ।
148. 'निर्वसना' - डॉ0 विष्णु विराट ।
149. 'प्रम्लोचा', पृ0 42 ।
150. 'नीलाम्बर के नीचे', पृ0 38 ।
151. 'धूम्रवन से लौट आई लाल परियाँ', पृ0 23 ।
152. 'बिन्दिया के बोल', पृ0 16 ।
153. 'गुजरात के समकालीन हिन्दी कवि', पृ0 62 ।
154. 'फैली पलाश के कानन लौ'- श्री विष्णु विराट ।
155. 'प्रम्लोचा', पृ0 50 ।
156. 'प्यासी धरती : खाली बादल', पृ0 3 ।
157. 'चाँद, चाँदनी और कैक्टस' - डॉ0 अम्बाशंकर नागर ।